संस्थापक
योगयोगेश्वर अनन्तश्री
चन्द्रमोहनजी महाराज

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों एवं शिक्षाओं का प्रतिपादक मासिक

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन
सैंवाई-283202 (आगरा) उ.प्र.

वर्ष : 38; अंक : 7
अक्टूबर 2005

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग-योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डॉ.) रामलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक :
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष
एवं गुरु भाई-बहिन

इस अंक में...

- अमृत कण 2
- नरक के द्वार काम, क्रोध और लोभ (विशेष लेख) 3
- सम्पादकीय 8
- श्रीसिद्धगुफा एवं श्री गुरुदेव –डॉ० रुद्रदत्त चतुर्वेदी 11
- हमारे सद्गुरुदेव –विजय सिंह 15
- भजन –भूपेन्द्र 'अंकुश' (जलेसर) 18
- मेरे श्री गुरुदेव –कुँवर अनिल कुमार सिंह 19
- विभूति मेरे गुरु की –जगदीश राय बंसल अग्रम 22
- श्रीगुरुदेव के संस्मरण –केशवदेव उपाध्याय 23
- मेरे गुरुदेव –कृष्ण कुमार पाण्डे (गोरखपुर) 26
- माता गोदावरी देवी के ध्यानानुभव –आचार्य पूर्णचन्द पन्त 29
- श्री महाप्रभुजी का सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में योगदान –अवनीश भटनागर ... 34
- इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम...... –राजेश कुमार श्रीवास्तव(राजू) .. 38
- प्रभु चरणों में समर्पित –राजेश कुमार श्रीवास्तव (बलिया) 39
- श्री रामलाल प्रभवे नमः –वेदव्रत द्विवेदी (उमापुर) 40

एक प्रति	: रु.	09-00
वार्षिक शुल्क	: रु.	100-00
द्विवार्षिक	: रु.	190-00
आजीवन	: रु.	800-00

|| श्री चन्द्रमोहन गुरवे नमः ||

परमपूज्य गुरुदेव

योगयोगेश्वर श्री चन्द्रमोहनजी महाराज

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र, संवाई (एत्मादपुर) आगरा

वर्ष 38
अंक 7

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्,
कल्यानां भवतु तहतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

अक्टूबर
2005

विश्वे देवा अभिरक्षन्तु

महा्यं यजन्तां ममयानीष्टाकूतिः
सत्था मनसो मे अस्तु।
एनो मा नि गां कतमच्चनाहं
विश्वे देवा अभि रक्षन्तु।।

(अथर्ववेद)

अर्थात्

मेरे प्राप्त करने योग्य इष्ट-कर्म ही मुझको प्राप्त हों, मेरे मन में सत्य-संकल्प ही हों, मैं कभी भी कोई पाप कर्म न करूँ, सब उत्तमगुण और शुभ कर्म करूँ, ईश्वर मेरी रक्षा करें।

अमृतकण

ज्ञेयः स नित्यसन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते।।

(गीता ५/३)

हे अर्जुन ! जो पुरुष न किसी से द्वेष करता है और न किसी की आकांक्षा करता है, वह कर्मयोगी सदा सन्यासी ही समझने योग्य है, क्योंकि रागद्वेषादि रहित पुरुष सुखपूर्वक संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है।

✿ ✿ ✿

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते।।

(गीता २/५६)

दुःखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा मुनि स्थिर बुद्धि कहा जाता है।

✿ ✿ ✿

स्वानन्दभावे परितुष्टिमन्तः प्रशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिमन्तः।
निरन्तरं ब्रह्मणि ये रमन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः।।

(शंकराचार्य)

जो अपनी आत्मा के आनन्दभाव में सदा प्रसन्न रहते हैं, जिनकी सब इन्द्रियों की वृत्तियाँ प्रशान्त रहती हैं, जो निरंतर ब्रह्म में ही रमण करते हैं, ऐसे पुरुष केवल लंगोटी लगाये हुए हों तो भी महाभाग्यशाली हैं।

✿ ✿ ✿

अनाश्रिता दानपुण्यं वेदपुण्यमनाश्रिताः।
रागद्वेषविनिर्मुक्ता विचरन्तीह मोक्षिणः।।

(विदुरनीति ४/५३)

मोक्ष की इच्छा रखने वाले मनुष्य दान के पुण्य का आश्रय नहीं लेते, वेद के पुण्य का भी आश्रय नहीं लेते, किन्तु निष्काम भाव से राग–द्वेष से रहित हो इस लोक में विचरते हैं।

✿ ✿ ✿

❑ विशेष लेख

नरक के द्वार काम, क्रोध और लोभ

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

भगवान् ने गीता में नरक के द्वार के रूप में तीन बातों को बताया है। भगवान ने कहा–

'त्रिविधम् नरकस्येदं द्वारम् नाशनात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभः तस्मादेतत् त्रयंत्यजेत्'।।

अखिलात्मा त्रिजगत पावन श्री कृष्ण चन्द्र अपने मुखारविन्द से कहते हैं– काम, क्रोध और लोभ ये नरक के तीन द्वार हैं। इसलिये योग साधक को इन्हें त्याग देना चाहिए। इनमें पहला नरक का द्वार है काम। व्यक्ति जितना–जितना कामनाओं का चिन्तन करता चला जाता है, उसकी प्रवृत्ति उसमें बढ़ती रहती है। मनुष्य सोचता रहता है इदमद्य मया लब्धम् इमं प्राप्स्ये च मनोरथम् असौ मयाहतः शत्रुर्हनिष्ये चापरान पि ! आज मैंने यह तो प्राप्त कर लिया है अब मुझे यह वस्तु और प्राप्त करनी है। मैंने अमुक शत्रु को मार दिया है अब मैं अमुक को भी मार दूँगा– आदि–आदि बातें सोचता रहता है। वह सोचता है बहुत बड़ा यज्ञ करूँगा, दान करूँगा इससे मेरा बहुत नाम होगा। इस प्रकार से कामनाओं के जाल में फँस जाता है। सबसे मुख्य कामना भोग की वासना कही जाती है। यह इतना बुरा जाल है कि बड़े–बड़े ऋषिमुनि भी इस पर विजय नहीं पा सके। जिन लोगों को यह निश्चय हो गया कि हम काम विजयी हो गये हैं, वे भी विजयी नहीं हो पाये। ऋषि, मुनि, सिद्धलोग वशिष्ट, विश्वामित्र भी इस से प्रभावित रहे हैं।

एक बात मैंने तुम्हें बताई थी कि जब योगी योग की सम्प्रज्ञात अवस्था की दूसरी अवस्था विचारानुगत समाधि में पहुँचता है तो उसके पतन का भय रहता है। यदि उससे आगे निकल जाता है तो वह पतन से परे हो जाता है। ऋषि मुनि जो काम पर विजय प्राप्त करने की स्थिति में आये तो देवताओं ने उनके सामने अप्सरायें भेज दीं। वे उनके सामने जाकर नाच–गान करने लगतीं। वे लोग भी विलास में पड़ गये और अप्सरायें उनकी सारी शक्ति छीन–छान कर स्वर्ग लोक को चली जातीं। वे अप्सरायें इसलिये ही भेजी जाती हैं ताकि योगी–ध्यानी व्यक्ति स्वर्ग पर अधिकार न कर ले, देवताओं से आगे न बढ़ जायें। इसलिये योगियों को गिराने के लिये ही उन्हें भेजा जाता है। कामना भोग की वासना

संसार में जो अन्न खाता है उसके अन्दर रहती है। वह छूटती नहीं। गीता के दूसरे अध्याय में भगवान ने कहा है–

'विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्ज रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।'

जो मनुष्य निराहारी भूखा रहता है उसकी विषय वासना हट जाती है किन्तु उसको विषय वासना का रस ज्ञान रहता है। उसे भोग का ज्ञान रहता है उसे ज्ञान रहता है कि भोग के अन्दर आनन्द रहता है। भूखा रहने के कारण उसकी काम प्रवृत्ति रहे या न रहे यह दूसरी बात है किन्तु भावना यह रहती है कि भोग में आनन्द रहता है। अखिलात्मा कहते हैं– **'रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते'** वासना का जो रस है वह भी पर दर्शन के बाद हट जाता है। पर दर्शन वह स्थिति है जिसका वर्णन भगवान पतंज्जलि ने योग दर्शन में दूसरे सूत्र में कर दिया है योगश्चित्त वृत्ति निरोधः अर्थात् चित्तवृत्तियों का नितराम् रोध– समूलोन्मूलना।

चित्त वृत्तियाँ रहेंगी नहीं तो भोग भावना कहाँ से रहेगी ? न रहेगा बाँस न बजेगी बांसुरी। वहाँ पर सवाल किया चित्तवृत्तियाँ नहीं रहेंगी उसका नाम योग है किन्तु यह स्थिति कैसी होती है ? उस समय जीवात्मा का क्या स्वरूप होता है ? इसका उत्तर अगले सूत्र में दिया है **'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्'** उस समय जीवात्मा अपने यथार्थ स्वरूप में आ जाती है–असली रूप में आ जाता है उसका असली रूप क्या है ? असली रूप है जिसमें न मन रहता है न बुद्धि रहती है। न कोई गुण धर्म ही रहते हैं। असली रूप की कोई उपमा नहीं दे सकता। व्यास भाष्य में व्यास जी महाराज ने केवल एक बात कही है–प्रश्न आया **''स्वरूप प्रतिष्ठा कीदृशी''** स्वरूप प्रतिष्ठा कैसी होती है ? इसका उत्तर दिया–**''चित्तशक्ति यथा कैवल्ये''** अर्थात् जब आत्मा अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाती है तो उसकी स्थिति वैसी ही होती है जैसे कैवल्यावस्था में ! कैवल्य मायने अकेलापन। योगदर्शन के सिद्धान्तानुसार मुक्ति कैवल्य को ही कहते हैं। **''सत्व पुरुषयोः शुद्धि साम्ये कैवल्यम्''** जब प्रकृति और पुरुष अपने–अपने स्वरूप में आ जाये तब कैवल्य होता है। भोग वासना की कामना, भोगों के भोगने से कम नहीं हुआ करती। यह नियम है–

'न जातु कामा कामानामुप भोगेन शाम्यति'

मन से पैदा हुई कामनायें कामनाओं के भोग से हटती नहीं है प्रत्युत जैसे आग में घी डालने पर आग और भड़क जाती है उसी प्रकार से कामनाओं के उपभोग से कामनाएँ और बढ़ जाती हैं। इसलिये काम मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। काम ही सारी कामनाओं का

सृजन करता है। कोई विरला ब्रह्मचारी जो उर्ध्वरेतस हो जाये–उर्ध्वरेतस का अर्थ है नाभिमण्डल के वीर्य को आकर्षण कर सारे शरीर में फैला दे, ऊपर को ले जाये ! ऐसा जो ब्रह्मचारी है वह कामजयी बनता है जो विचारानुगत समाधि से आगे निकल जाता है। विचारानुगत तो खतरे की ही जड़ है। उस में तो स्वर्ग के लालच आ जाते हैं और वह पथ से च्युत हो जाता है। ये बातें होती हैं।

ब्रह्मचारी हरिभक्त चैतन्य हमारे बच्चे हैं हमने उनको जंगलों में रहकर तपस्या व साधना की आज्ञा दी थी। उन्होंने जंगलों में खूब तपस्या की। एक दिन वह अपना अनुभव हमें बता रहे थे। मैंने तुम्हें कई बार बताया है कि– **स्वाध्यायदिष्ट देवता सम्प्रयोगः** अर्थात् स्वाध्याय करने से इष्ट के ऋषि मुनियों के दर्शन हुआ करते हैं। हरि भक्त जंगल में घूमते हुये कहीं जा रहे थे। एक स्थान पर उन्हें बहुत लम्बा तड़ँगा व्यक्ति मिला। वह अतिवृद्ध दिखाई दे रहा था। बाल उसके अत्यन्त सफेद थे। भौंहें लटक कर नीचे आ गई थीं। शरीर में एक घाव जैसा भी था। हरि भक्त ने उनसे पूछा–आप कौन हैं ? आप को यह घाव कैसे लगे हैं ? वह व्यक्ति कहने लगा–मैं महाभारत युद्ध के समय का दुर्योधन की सेना का सिपाही हूँ। युद्ध समाप्त होने के बाद मुझे सिद्ध गुरु की संगति मिल गई जिसके फलस्वरूप मैं अजर अमर हूँ। हरिभक्त ने पूछा–आप को घाव क्यों लगे हुये हैं ? आप तो अजर अमर हैं शरीर को नया भी कर सकते हैं। उत्तर में उन्होंने एक बात कही–मेरे शरीर में ये घाव अर्जुन के बाणों के हैं। अर्जुन बाण चलाता था और भगवान् कृष्ण रथ पर बैठे हुये हँसते रहते थे। इस तरह शरीर पर घाव लगते रहते थे। श्री कृष्ण की याद में इस घावों को रखे हुये हूँ। हरिभक्त चैतन्य ने पूछा–कृष्ण जी कैसे रहते थे ? उन्होंने कहा–उनको क्रोध आते कभी देखा ही नहीं था। वे तो सदा हँसते ही रहते थे। इसके बाद हरिभक्त चैतन्य को कई अनुभूतियाँ हुईं। वे विचारानुगत समाधि के योगी थे। वहाँ देवकन्यायें आ गईं। पहले तो उन्होंने अपना श्रृंगारमय अभिनय दिखाया। ये अभिनय इसलिये दिखाती हैं ताकि उनकी शक्लों को और अभिनय को देखकर व्यक्ति मोहित हो जाये और अपने आस पास जाकर पूछने लगे–तुम कौन हो, कहाँ से आयी हो ? किन्तु हरिभक्त चैतन्य पर उनके अभिनय का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उन्होंने हरिभक्त चैतन्य से कहा–तुम हमारे साथ शादी कर लो। हरिभक्त ने कहा शादी तो मैं कर लूँगा; किन्तु क्या तुम इसी प्रकार बनी रहोगी। उन्होंने कहा–नहीं, हम यहाँ बहुत समय तक नहीं रह सकतीं, तुम्हें ही स्वर्ग चलना पड़ेगा। जितने दिन का तुम्हारा पुण्य होगा उतने दिन तुम हमारे साथ रह सकोगे। हरिभक्त ने उनके साथ जाने से मना कर दिया। इसके बाद वे अप्सरायें

आकाश मे उड़ गई और अदृश्य हो गयी।

मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य को गिराने का काम कामना का ही है। बड़े–बड़े ऊँचे योगी भी जो कामना में ग्रस्त रहे वे यथार्थता को नहीं पा सके। एक बात यह और याद रख लो। यह कामना विचारानुगत समाधि में ही प्रबल रहती है। योगदर्शन कहता है–**स्थान्युपनिमन्त्रणे सङ्गास्मयाकरणं अनिष्ट प्रसंगात्** अर्थात् स्थानी देवता के बुलाये जाने पर उनकी बात नहीं माननी चाहिये और मन में यह अभिमान भी नहीं रहना चाहिए कि मैं अब तो देवताओं का भी पूज्य बन गया हूँ। तीन रास्ते भगवान् ने नरक बताये हैं उनमें एक तो है काम। और दूसरा नरक का द्वार है क्रोध–

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।

काम और क्रोध दोनों रजोगुण से उत्पन्न होते हैं और साधक के प्रबल वैरी है। मनुष्य एक बार क्रोध करता है। क्रोध के द्वारा उसकी आत्मिक स्थिति तत्काल निकल जाती है। दूसरे का अनिष्ट तो हो जाता है। उसके मुख से निकला शाप फलीभूत हो जाता है उसको भोगना पड़ेगा किन्तु शाप देने वाला भी खाली हो जाता है। जितनी ताकत संचित की, शाप देने पर वह निकल जाती है। क्रोध में मनुष्य जिसके प्रति जो भावना करता है, यदि वह योगी है आत्मवान है तो शाप अगले पर लग जायेगा। क्योंकि उसके मन में ताकत है। वह पत्थर मार सकता है। शाप लगेगा उधर उसका पुण्य क्षीण हो जायेगा। कामना करेगा तो भोग से पुण्य क्षीण हो जायेगा। क्रोध करेगा तो क्रोध से पुण्य क्षीण हो जायेगा। इसलिये सिद्ध लोग अपने शिष्यों पर शक्तिपात करके जंगलों में उन्हें निर्बीज समाधि में बिठा देते हैं। उनकी वृत्तियाँ नीचे दबी रहती है वर-शाप के झमेले का समय ही नहीं आ पाता। यदि कोई वर–शाप के झमेले में पड़ेगा तो जनम–मरण का चक्कर बना रहेगा। एक बार शाप देगा शक्ति सारी निकल जायेगी। थोड़ी देर के लिये मानो तुम्हारा ध्यान लगता है और ध्यान काल में किसी पर क्रोध करते हो तो ध्यान की ताकत खत्म हो जायेगी। बड़े–बड़े सिद्ध लोग भी जो शापादि देते है उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है और जन्म मरण के चक्कर में पड़े रहा करते हैं। ये काम और क्रोध की बात हुई।

तीसरी बात है लोभ की ! लोभ हर व्यक्ति को होता है। हममें भी है और तुम में भी। मनुष्य यह सोचता रहता है कि मिल गया है, इतना और मिल जाना चाहिये। हमारे आश्रम के लिये इतनी जमीन मिल गई इतनी और मिलनी चाहिये थी आदि–आदि बातें लोभ की रहा करती हैं। जो व्यक्ति अपने मन में यह भावना रखता है चलो ! पैसा आया है–इसे खर्च करना ही करना है इसको ठीक जगह पर लगा देना है, लालच की भावना मन में नहीं रहती

तो यह उसके बन्धन का कारण नहीं रहता। लोभ न करने का अर्थ यह नहीं कि पैसा आये तो उसे फेंक दें। पैसा तो रखे किन्तु उसे सत्कर्म में खर्च करें। एक बार हम एक जगह पर गये। एक भक्त ने हमें निमन्त्रण पर अपने घर बुलाया। पहले वह गाँव का रहने वाला था किन्तु अब बहुत बड़े शहर कलकत्ता में रहता है। करोड़ों का मालिक है वह। हम लोग भोजन के लिये गये तो ऐसा भोजन बनवाया जो गरीब से गरीब भी न बनवाये। वैसे तो हम घरों में कच्चा भोजन करते नहीं है पूरी आदि पक्का भोजन ही लेते हैं। हम तो पुराने नियम से चलते हैं। बनवाया तो उसने भोजन पक्का ही किन्तु सब्जी में पानी की ही भरमार थी। बस ! ज्यादा कहने की बात नहीं। यह क्या था ? सम्पत्ति का लोभ ! इस प्रकार के व्यक्ति का पैसा जमा ही रह जाता है, वे खाली ही चले जाते हैं।

उनके भाग्य में ऐसे ही रूखा सूखा खाना लिखा रहता है, पैसे जमा खाते में रहते है। उनका समय आता है वे आगे चले जाते हैं। उनके बेटे खायें, पोते खायें कोई खाये, यह दूसरी बात है। इसलिये **त्रिविधम् नरकस्येदं द्वारं नाशमात्मनः**–अखिलात्मा त्रिजगत पावन मेरे तुम्हारे सब के प्राणों में वास करने वाले श्री कृष्ण चन्द्र ने यह बात कही है। इन तीनों को साधक को छोड़ देना चाहिये। विषयों की कामना न करे। क्रोध न करे तथा लोभ में न फँसे। पैसे का लाभ न करें। पैसे ठीक जगह पर खर्च कर दे। 'भूखे पड़े हैं पड़े रहेंगे। घर में कोई बीमार पड़ा है पड़ा रहेगा। पैसा क्यों खर्च करे बचा रहेगा तो रहा रहेगा।' इस प्रकार का लालच खतरनाक होता है। इसलिये त्रिलोक के चन्द्रमा की आज्ञा है– **''तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत्''**। इन तीनों को छोड़ दे। बस ! तुम लोग भी इन तीनों को छोड़ देना। अपने ध्यानाभ्यास को बराबर बढ़ाओ। यहाँ प्रयाग में जो ध्यान में बैठता है उसका बहुत पुण्य बढ़ता है। ध्यान में प्रतिदिन बैठो। यहाँ स्नान करने का पुण्य है हीं किन्तु यहाँ इस क्षेत्र में रहने का भी पुण्य मिलेगा। इस प्रयाग क्षेत्र में जो जितना भजन कर लेगा वह रेख पर मेख लगवायेगा। वह संसार सागर से पार जाने की कमाई कर लेगा। इसलिये काम, क्रोध और लोभ को छोड़कर ध्यान में बैठो और अपने आप को क्रियाशील बना करके समाधि को प्राप्त करो1 श्री प्रभु जी के चरणों को याद करके, उन्हें प्रणाम करके अपने अभ्यास में बैठ जाया करो। उनकी कृपा बरसती रहेगी, शक्ति मिलती रहेगी। निहाल हो जाओगे, कृतार्थ हो जाओगे। बस ! बार–बार आशीर्वाद।

✿✿✿

• सम्पादकीय

गुरुदेव भगवान् का प्राकट्य दिवस

आचार्य (डा०) दासलाल ब्रह्मचारी

गुरुदेव योगिराज अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज बीसवीं शताब्दी के अद्वितीय योगी हुए हैं। आप को योगी कहूँ, गुरु कहूँ, ऋषि कहूँ अथवा प्राणाधार आत्मा कहूँ—सभी नाम आप के लिये चरितार्थ हैं। सिद्धयोग (शक्तिपात) की महान परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने वाले आप को योगिसमाज सदा–सदा के लिये याद करता रहेगा। योगिराज हठयोग, राजयोग आदि सभी प्रकार के योग के स्वामी होते हैं। आप का देदीप्यमान मुखमण्डल ब्रह्मविद्, योगनिष्ठ योगी का परिचय स्वयं ही दे देता है। गीता की भाषा में ऐसे महापुरुष युक्तयोगी कहलाते हैं। **''योगी कर्मफल' त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्''**, अर्थात् योग युक्त हुआ ऐसा योगी कर्मफल को त्यागकर अखण्ड शान्ति को प्राप्त करता है। भगवान् मत्स्येन्द्रनाथ आदि नाथ सिद्धों ने आत्मसाक्षात्कार के लिये प्राणजय हठयोग की दुर्ज्ञेय क्रियाओं की साधना पर बल दिया है। गुरुदेव के वज्र के समान अत्यन्त दृढ़ शरीर सौष्ठव को देखकर आपके प्राणजय एवं हठयोगी होने का प्रमाण स्वयं मिल जाता था।

आपके जीवन में एक तरफ तो भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र का निष्काम कर्मयोग तथा दूसरी तरफ भ[illegible] शिव के समाधि योग का समुच्चय था। कृष्ण सायुज्य को प्राप्त आप को शैशवावस्था में ही भगवान् कृष्ण चन्द्र का दर्शन एवं सानिध्य अहर्निश बना रहता था। भगवान् के साथ आप नाना प्रकार की क्रीड़ायें करते हुये विहार करते। संवाद, परिहास के समय माताश्री पूछती–बेटा ! यहाँ कोई दूसरा बालक नहीं है तुम किस के साथ बातें कर रहे हो ? ये उस परम तेजस्वी दिव्य बालक के विषय में बताते, किन्तु माताश्री समझ नहीं पाती थीं। क्योंकि उन्हें वहाँ कोई दिखाई नहीं देता था। इस प्रकार से उठते–बैठते, चलते–फिरते हर समय भगवान् का दर्शन बना रहता था। गुरुदेव ने इन बातों का संकेत मात्र से **''दिव्य जीवन दर्शन''** नामक पुस्तिका में वर्णन किया है।

भौतिक स्तर पर आपका आविर्भाव हरियाणा प्रान्त में जिला पानीपत ग्राम अलुपुर में सन् १६०६ ई० में हुआ। गाँव में पं० हरिराम जी बहुत ही परोपकारी एवं धार्मिक महापुरुष थे। उनके दो पुत्र व पुत्री हुई। दो पुत्रों में बड़े का नाम स्वनामधन्य पं० देवीराम जी था।

आप ही गुरुदेव को पिता के रूप में मिले। गुरुदेव ने अपने जन्म लेने से पहले ही स्वप्न में अपने पिताश्री को बताया कि मेरी माता जी को अमुक–अमुक दिव्य रसायन का सेवन कराओ। ऐसा ही किया गया। इसका प्रभाव यह रहा कि गुरुदेव जी अपने सम्पूर्ण जीवन में कभी बीमार नही हुये। पूज्य पिताश्री ने बाल्यकाल से ही आपका जीवन तपोमय बना दिया था। संयम सदाचार एवं ब्रह्मचर्य की शिक्षा पिताश्री से ही मिली। श्री पिता जी के उपदेशों का जीवपर्यन्त प्रभाव बना रहा। १६–१७ वर्ष की अल्पायु में ही आपको योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज का दर्शन लाभ मिला। इन्हीं से आप ने योग दीक्षा प्राप्त की। गुरुदेव के प्रति पूर्ण समर्पण भाव ने उन्होंने आपको अपना रूप बना दिया।

अपने गुरुदेव की सारी अध्यात्म सम्पदा आप को मिल गई। आप कहा करते थे–श्री प्रभु जी का मेरे जीवन में प्रकाश है इसी से मेरे द्वारा विभिन्न कार्य हुए हैं। आप ने सिद्धयोग की परम्परा को सजीव रखा और लाखों योग जिज्ञासुओं को योग के अमर पथ का पथिक बना दिया। उपनिषदों में आता है कि ब्रह्म तत्व के जिज्ञासु को हाथ में समिधा (हवन की लकड़ी) लेकर ऐसे गुरु की शरण में जाना चाहिए जो श्रोत्रीय अर्थात् शास्त्रों का मर्म समझने वाला हो तथा ब्रह्मनिष्ठ हो। पूज्यपाद गुरुदेव योगशास्त्र व उपनिषदों के पारंगत होने के साथ–साथ ब्रह्म साक्षात्कार वाले योगिराज थे। गुरुदेव व्यापक सत्ता के स्वामी होने पर भी सदेह होकर शिष्य के परम कल्याण (मुक्ति) के लिये कृतसंकल्प रहते थे। शिष्य के पशुत्व का नाश करने वाले पशुपति रूप गुरुदेव नित्य ही अरेण्य एवं वरेण्य हैं। शरीर के तिरोहित होने पर भी उनकी व्यापक सत्ता काम करती रहती है। इस प्रकार से स्थूल शरीर के बिना भी वे चिन्मय रूप में शिष्यों का कल्याण करते रहते हैं।

नाना रूप धारण कर शिष्य के संशय एवं संताप का हरण करते रहते हैं। गुरुदेव ही पूर्ण पुरुष हैं ये ही शिष्य को पूर्णत्व दे सकते हैं। **'गुरोः संतोषते सर्वे'** गुरुदेव के संतोष मात्र से शिष्य के सभी कार्य सिद्ध होते हैं। जप, तप, स्वाध्याय, तीर्थस्नान आदि का फल गुरुदेव की प्रसन्नता से ही मिल जाता है। जो व्यक्ति जीवन में जप, तप, व्रत आदि पुण्य वृद्धि के कार्य करते रहते हैं कालान्तर में उन्हें 'सिद्धगुरु' मिल जाते हैं। **'पुण्य पुञ्ज बिनु मिले नहीं सन्ता'** पुण्य पुञ्ज से ही गुरुदेव मिला करते हैं। सिद्धों का संग ही सच्चे अर्थों में सत्संग कहलाता है। **'सताम्-महत्ताम्- सिद्धानाम् संगः सत्संगः'** महान योगियों का संग ही सत्संग कहलाता है।

पूज्यपाद गुरुदेव की सबसे बड़ी कृपा गृहस्थ समाज पर यह है कि उन्होंने गृहस्थ समाज को ध्यानयोग की वह अमूल्य निधि दी जिसके लिये साधक लोग वन कन्दराओं में योगियों को ढूंढते फिरते हैं ताकि उन्हें योग का सही मार्ग मिल जाये। शक्तिपात करके गुरुदेव ने उन्हें योग की ऊँची-ऊँची स्थितियां प्रदान की हैं जो अत्यन्त कठोर साधनाओं से मिला करती हैं।

श्री महाप्रभु जी के १९३८ में लीलावसान के पश्चात् गुरुदेव श्री सिद्धगुफा सवाई आ गये। यहाँ आकर गुरुदेव ने पहले-पहले योग साधनों से बीमार व्यक्तियों का इलाज करना शुरू कर दिया। आसपास के व्यक्तियों को पूर्ण लाभ मिला। अब तो दूर-दूर से रोगी आने लगे और सभी को गुरुकृपा से अभूतपूर्व लाभ हुआ। यही व्यक्ति आगे चलकर अन्तरंग योग के जिज्ञासु बन गये और गुरुदेव से योग दीक्षा (शक्तिपात दीक्षा) प्राप्त कर ध्यानयोग के साधक बन गये। उन्हें अन्तरानुभूतियाँ होने लगी। ध्यान योग की शक्ति व महत्ता को समझने लगे। इस प्रकार से गुरुदेव का योग प्रचार कार्यक्रम बढ़ता ही चला गया। देश के विभिन्न स्थानों से योग प्रचार कार्यक्रम के लिये माँग होने लगी। गुरुदेव सभी जगह के कार्यक्रम नही दे पाते थे। गुरुदेव ने कई अखिल भारतीय योग सम्मेलन तथा विश्व योग सम्मेलनों में अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। दिसम्बर १९८६ में तत्कालीन राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने इन्हें योग शिरोमणि की उपाधि से विभूषित किया। इस प्रकार से गुरुदेव योग के आकाश में दैदीप्यमान सूर्य की तरह आलोकित होते रहे।

आज विजय दशहरा के पावन दिन गुरुदेव का पावन प्राकट्य दिवस उनके भक्तों के द्वारा देश के अनेक स्थानों पर मनाया जा रहा है। श्री सिद्ध गुफा सिद्ध पीठ सवाई आगरा में, गुरुदेव के जन्म स्थान अलुपुर में, सिद्धगुफा योग मन्दिर आर. के. पुरम दिल्ली में तथा उनके द्वारा स्थापित सभी केन्द्रों में मनाया जा रहा है। श्री गुरुदेव के इस पावन प्राकट्य दिवस पर उनके पावन चरणों में सभी भक्तों की ओर से साष्टांग प्रणाम है।

✿✿✿

धनेनाधर्मलब्धेन यच्छिद्रमपिधीयते।
असंवृतं तद् भवति ततोऽन्यदवदीर्यते।। *(विदुर नीति)*

अधर्म से प्राप्त हुए धन के द्वारा जो दोष छिपाया जाता है, वह तो छिपता नहीं, उससे भिन्न और नया दोष प्रकट हो जाता है।

श्री सिद्धगुफा एवं श्री गुरुदेव

लेखक—**डा. रुद्रदत्त चतुर्वेदी**

रामनवमी का पुण्य पर्व भारतीय जनमानस के लिए प्रेरणा और कर्तव्य पालन का पर्व है, और यही शुभ दिन है जब योगयोगेश्वर महाप्रभु रामलाल जी का अवतार योगीराज अरविन्द, महर्षि दयानन्द और रामकृष्ण परमहंस की परम्परा में हुआ था। रामलाल जी महाराज, जिन्हें उनका शिष्य परिवार प्रभुजी के नाम से जानता है, ने अमृतसर में जन्म लेकर योग की प्राचीन लुप्त विद्या के पुनः प्रचार हेतु अपनी कर्मभूमि उत्तर प्रदेश को बनाया। ऋषिकेश तथा आगरा फिरोजाबाद राजमार्ग पर एत्मादपुर के समीप संवाई ग्राम वह पुण्यस्थल है जहाँ श्री प्रभुजी और उनके परमप्रिय शिष्य योगसम्पदा के धनी योगीराज चन्द्रमोहन जी महाराज ने रहकर अपनी दैवी सम्पदा से हजारों लाखों लोगों को केवल त्रयतापों से मुक्ति ही नहीं दिलाई बल्कि सिद्धयोग की दीक्षा और शक्तिपात के माध्यम से इन्हें श्रेय मार्ग का राही भी बनाया।

यद्यपि यह अज्ञात ग्राम संवाई योगयोगेश्वर प्रभु जी रामलाल जी के चरणारबिन्दों से पवित्र हुआ था परन्तु वह एक विस्मृत सी घटना बन चुकी थी। ज्ञानगंज हिमालय के सिद्धाश्रम में बसने वाले महासिद्धों में से एक करुणा सागर श्री प्रभु जी ने विवेकानन्द की भांति अपने शिष्य के रूप में स्थूल और सूक्ष्म जगत की सिद्धियों के अधिष्ठाता अपने प्रिय शिष्य (श्रीयुत) चन्द्रमोहन को यहां भेजा जिन्होंने इस छोटे से ग्राम को सिद्धधाम के रूप में स्थापित ही नहीं वरन परिवर्धित करके देश विदेशों में प्रतिष्ठित किया। यहां से अष्टांग योग की जो धारा प्रवाहित हुई उससे अनेकानेक प्राणियों ने भौतिक और दैविक सम्पदा से अपने को कृत कृत्य पाया।

१९३८ में श्री प्रभु जी के निर्वाण के पश्चात् पूज्यपाद चन्द्रमोहन जी ब्रह्मचारी ओमप्रकाश पालीवाल के परिवारीजनों व अन्य के आग्रह पर सिद्धगुफा संवाई आश्रम पधारे। उस समय इस आश्रम की गुफा पर किवाड़ भी नहीं थे। गुरुदेव चन्द्रमोहन जी ने गुफा में किवाड़ लगवाये तथा श्री प्रभु जी के चित्र की वहां स्थापना की। कुछ समय यहां रहकर तथा योगसाधना से क्षेत्र के निवासियों को लाभान्वित करके श्रीयुत चन्द्रमोहन जी पुनः साधना हेतु ऋषिकेश चले गये। परन्तु श्री प्रभु जी की इच्छा तो इस गुफा को सिद्धपीठ बनाकर योग की गंगा बहाना थी अतः उन्होंने एक उच्च सुसंस्कारी श्री रघुनन्दन प्रसाद जो बाद में टाट वाले बाबा के नाम से विख्यात हुए को यहां भेजा और गुरुदेव को उन पर

कृपा दृष्टि हेतु।

बस फिर क्या था एक और एक ग्यारह की कहावत चरितार्थ हुई श्री गुरुदेव ने यहां बाग में अपने लिये पर्णकुटी बनाई और टाटबाबा ने पेड़ पौधे लगाकर इसे आश्रम का स्वरूप प्रदान किया। चूँकि आश्रम में पानी की व्यवस्था नहीं थी अतः कूप निर्माण हुआ। पहिले यह गुफा "बाबा की गुफा" कहलाती थी परन्तु श्री गुरुदेव ने इसे "सिद्धगुफा" नाम प्रदान किया। इसके साथ ही श्री गुरुदेव ने प्रातः काल से मध्यांह दो बजे तक लोगों को श्री प्रभु जी प्रदत्त "जीवन तत्व साधन" और योग साधना कराना प्रारम्भ कर दिया। श्री प्रभु जी की कृपा से यहां सभी को लाभ प्राप्त होने लगा। अतः उन दिनों ग्राम निवासी एक साधक काशीराम पुजारी के मन में शंका हुई। कि यहां सभी को फायदा क्यों होता है ? श्री गुरुदेव की प्रेरणा से उन्होंने ध्यान में देखा कि गुफा के सामने श्री प्रभु जी विराजमान हैं और उनके प्रभामंडल की किरण जिस जिस को छू जाती है वही ठीक हो जाता है। दूसरे शब्दों में सिद्धगुफा योगासन व साधना के अतिरिक्त सिद्ध कृपा केन्द्र के रूप में भी जानी गयी।

यह योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी के अथक प्रयासों और निरन्तर साधना का फल है कि यहां जंगल और एक पर्णकुटी थी जिसका रास्ता अनजान था और स्थान अपरिचित आज वहीं ४–५ बड़े हाल और लगभग १०० कमरे, अलग गौशाला और सभी व्यवस्थाओं से परिपूर्ण एक आश्रम है जहां ५०–१०० व्यक्ति प्रतिदिन और रामनवमी मेले पर देश विदेश से हजारों विभिन्न व्यवसायों में लगे छोटे बड़े लोग प्राचीन भारतीय योग शास्त्र का साकार रूप देखने हेतु एकत्र होते हैं।

इस सिद्ध आश्रम की महत्ता और गरिमा बढ़ाने वाले युग पुरुष योगीराज चन्द्रमोहन जी के व्यक्तित्व की चर्चा के अभाव में यह लेख अधूरा ही होगा। यद्यपि यह गुफा श्री प्रभु जी की निवास स्थली रही थी। परन्तु इसे तीर्थस्थल बनाने का श्रेय श्री गुरुदेव जी को ही है। श्री गुरुदेव एक ओर जहां प्राचीन भारतीय संस्कृति के ज्ञाता विशेष रूप से "पातंजलि योगदर्शन" और "श्रीमद्भगवत् गीता" के प्रकांड विद्वान थे वहीं सच्चे अर्थों में निष्काम कर्मयोगी भी थे। उनका समस्त पुरुषार्थ श्री प्रभु जी के चरणारविन्दों में समर्पित था। वे अपने समस्त कार्यों का प्रेरणास्रोत और कर्ता श्री प्रभुजी को ही मानते थे। उनके ही शब्दों में–"मेरे जीवन में जो प्रकाश है वह उन्हीं कृपा निकेतन का है इसलिए जो भी क्रियायें मेरे जीवन में हो रही हैं, वे सभी उन्हीं कृपामय चरण कमलों में अर्पित हैं।" श्री गुरुदेव का स्वभाव कोमल और सरल था। गुणों का क्या बखान करें दया, क्षमा, शान्ति, सरलता, संतोष ज्ञान, वैराग्य सभी गुणों का मणिकांचन संयोग ही तो थे वे। उनके पास आने वाले

किसी व्यक्ति को कभी यह रंचभर अनुभूति नहीं हुई कि वह उपेक्षित है। सभी को ऐसा लगता था कि वह ही श्री गुरुदेव की कृपा और स्नेह का निकटस्थ भाजन है।

आप जन्मजात सिद्ध पुरुष थे, बस तलाश थी एक बहाने की। सो श्री प्रभुजी ने बुला लिया और श्री गुरुदेव की यश आकांक्षा रहित प्रवृत्ति को देखते हुए योग मार्ग में अग्रसर कराकर योग की उच्च साधना और सिद्धियों से विभूषित कर दिया। "सिद्ध योग" पत्रिका का २३ वर्षों तक निरंतर विज्ञापन रहित मासिक प्रकाशन करके उन्होंने योग के प्राचीन सिद्धान्तों की सरल शब्दों में व्याख्या की और जनमानस में योग के प्रति लगाव और सम्मान पैदा किया।

ऐसे कृपानिधान श्री गुरुदेव के चरणारविन्दों में आने का सौभाग्य मुझे १९५६ में हुआ था और तब से निरन्तर उन करुणा सागर की कृपा से कृतकृत्य होता रहा। प्रारम्भ में उनके रूप को देखकर (उन दिनों वे दाढ़ी भी नहीं रखते थे) मुझे उनमें आस्था नहीं जगी। परन्तु उन्हीं दिनों एक भैरव सिद्ध तांत्रिक ने श्री प्रभु जी के चित्र को देखकर बताया कि– "ये तो पावर हाउस हैं जहां से प्रकाश मिलता है बस बल्ब बनने की देर है जो जुड़ेगा और प्रकाशित हो जायेगा" बस शुभ संस्कार थे सो उनकी अनेकों कृपाओं को देखा। सन् १९७१ की १६ जून की शाम ६ बजे दिन के प्रकाश में घात (हंडिया) से पिताश्री की रक्षा एक देखा हुआ अनुभूत सत्य था। श्री गुरुदेव को लोभ, क्रोध और अभिमान छू तक नहीं पाया था।

उनकी उपस्थिति संवाई आश्रम को नयनाभिराम बना देती थी। प्रातः सायं का सत्संग, योगसाधना, अपने प्रिय साधकों की व्यथाकथा प्रेम से सुनना और पुष्प प्रसाद या रजप्रसाद के माध्यम से अपनी संकल्प शक्ति द्वारा उन्हें पीड़ा मुक्त करना उनकी दैनिक चर्या थी। प्रत्येक साधक के पत्र का उत्तर देकर उसे संबल प्रदान करना अन्य कहीं देखने को नहीं मिलती। त्रिपुरेश्वरी शक्ति पीठ के संस्थापक योगीराज डॉ. जितेन्द्र चन्द्र भारतीय के शब्दों में –"वे सिद्ध योगी सिद्ध पुरुष" थे। उनकी वाणी जहां स्नेहसिक्त थी तो वे अन्य साधुओं के विपरीत हास्यविनोद से वातावरण को आनन्दमय और जीवन्त बनाये रखते थे। एक ओर उन्होंने अपने इस गुरुधाम को उच्चकोटि का सिद्ध पीठ बनाने में अपना सारा पुरुषार्थ उड़ेल दिया था तो दूसरी ओर दूरगामी यात्रायें करके और योग शिविर लगाकर सिद्धान्त व्यवहार क्रियाओं और कृपाओं के माध्यम से उन्होंने योग प्रचार की यात्रा को जारी रखा। योग की लोक कल्याणकारी विधियों की जनजीवन में प्रतिष्ठा करने हेतु उन्होंने शक्तिपात करके इस आश्रम को सुविख्यात राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र बना दिया था। अनेकों बार अखिल भारतीय योग सम्मेलन के अध्यक्ष पद की गरिमा को उन्होंने बढ़ाया। परन्तु इस सबका श्रेय स्वयं न लेकर अपने गुरु प्रभु श्री रामलाल जी को ही दिया।

आज उनकी भौतिक अनुपस्थिति ने इस सिद्ध पीठ को सूना कर दिया है। उनके महाप्राण की प्रतीति मुझे बड़े अजीब रूप में हुई। मैंने श्री प्रभु जी को पहलीबार खुली आँखों अपने कक्ष में प्रवेश कर बड़ी बेचैनी के साथ दो तीन चक्कर लगाकर लौटते और अदृश्य होते देखा। मैं टी. वी. देख रहा था और हड़बड़ी में कुछ समझ न सका। परन्तु दो दिन बाद श्री गुरुदेव के ब्रह्मलीन होने का समाचार सुना तब कुछ समझ में आया।

आज यह सिद्ध पीठ श्री गुरुदेव के सुयोग्य और सामर्थ्यवान शिष्यों की संगठित कर्मठ सेवा से पुनः प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है और ऐसा विश्वास है कि समय के साथ आगे चलकर पूज्य गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी द्वारा पुनर्स्थापित और श्रमस्वेद से सिंचित इस आश्रम को जन गण मन की चेतना प्रस्फुरण का केन्द्र बने रहकर भारतीय योग परम्परा की निरंतरता के अक्षुण्ण बने रहने की संभावनायें बढ़ रही हैं जिसमें सेवानिवृत्त व्यक्तियों एवं सेवाभावी युवाओं के योगदान की अपेक्षा है और अंत में श्री गुरुदेव के चरणों और इस सिद्ध पीठ के लिए एक श्लोक के माध्यम से विनम्र प्रार्थना :

"नमामि सद्गुरुं शान्तं, प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्
शिरसा योग पीठस्तम्, धर्म कामार्थ सिद्धये।।"

✿✿✿

अरोषणो यः समलोष्टाश्मकाञ्चनः
प्रहीणशोको गतसन्धिविग्रहः।
निन्दाप्रशंसोपरतः प्रियाप्रिये
त्यजन्नुदासीनवदेष भिक्षुकः।।

(विदुरनीति)

जो क्रोध न करने वाला, ढेला-पत्थर और सुवर्ण को एक-सा समझने वाला, शोकहीन, सन्धि-विग्रह से रहित, निन्दा-प्रशंसा से शून्य, प्रिय-अप्रिय का त्याग करने वाला तथा उदासीन है, वही भिक्षुक (सन्यासी) है।

हमारे सद्गुरुदेव

प्रेषक–विजय सिंह

'श्रीगुरुगीता' में भगवान् शिव जी पार्वती जी से कहते हैं–

यस्य स्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम्।
य एव सर्वसम्प्राप्तिस्तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

श्रीसद्गुरु के स्मरण करने से ही ज्ञान का स्वयं उदय हो जाता है और इतना ही नहीं वे स्वयं ही सर्वप्राप्ति रूप हैं। तात्पर्य जो सद्गुरु का हो जाता है उसे सबकुछ लोक–परलोक तथा उससे परे तुर्यातीत अवस्था की प्राप्ति सहज हो जाती है। भगवान् परात्पर योगीश्वर शिव जी का कथन है कि ऐसे सद्गुरुदेव को मेरा नमस्कार है।

स्थितप्रज्ञा, ब्रह्मलीनता, सद्गुरु स्वारूप्यता मात्र सद्गुरु की प्रसन्नता से सुलभ हो जाता है। श्री गुरुदेव के दृष्टिपात करने से, उनके स्पर्श करने से, शब्द बोलने से साधक शिष्य अन्तर्मुखी बन जाता है। सद्गुरु को हम अपनी पकड़ में नहीं रख सकते क्योंकि वो अपरमित अखण्ड व्यापक सत्ता हैं, जिनको भी इस बात का थोड़ा भी अहंकार हुआ कि हमें तो सद्गुरु देव सबसे अधिक मानते हैं। मेरे हर सुझाव, हर बात को महत्व देते हैं। ऐसे साधक, अन्तः सेवी कष्ट में पड़ते देखे गये हैं।

हमारे सद्गुरु देव जी कहा करते थे कि देखो ! तुम किस परम्परा से सम्बद्ध हो इसको हर समय स्मरण रक्खो। आदि शिव भगवान सदाशिव जी, योगयोगश्वर महाप्रभु जी हमारे तुम्हारे कल्याण के लिए प्रतिपल सचेष्ट हैं। इसलिए मंत्र का खूब जाप करो तथा भावपूर्णता (अनन्य भाव) से उनका चिन्तन किया करो। वो कल्याण धन तुम्हारा अवश्य ही कल्याण करेंगे। सिद्ध योग–परम्परा का परिचय देते हुये सिद्धयोग अनुवर्ती महात्मा स्वामी मुक्तानन्द जी ने बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है–

'झिलमिलाते मणिदीपों की एक लड़ी है जो पुरातन काल से अब तक अज्ञान और मोह के अन्धकार को परास्त करती आयी है। वे मणिदीप क्या हैं ? वे अनन्त कोटि सूर्यों की प्रभावाले, सर्वज्ञ, सर्वक्षम योगी हैं जो सिद्ध कहलाते हैं। उनकी एक परम्परा है, एक भुक्ति–मुक्ति प्रदायनी धारा है जो आदिशिव से आरम्भ होकर अनेक सिद्धों में प्रवाहित होती हुई आज भी उतनी ही वरदायनी है। सिद्धों की इस अखण्ड प्ररम्परा के अन्तर्गत श्री गुरु अपने शिष्य को इस परम्परा की शक्ति व अधिकार देते आये हैं। अध्यात्म से सम्बन्धित सभी ग्रंथों में सद्गुरु महात्म को अपरिहार्य रूप में स्वीकारा गया है। उपनिषदों में मणिमय कठोपनिषद में महात्मा यमराज नचिकेता से स्पष्ट कहते हैं–

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्योः
न मेधना न बहुना श्रुतेन।
येमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैव
आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम्।।

हे नचिकेता ! आत्मा बड़े-बड़े भाषणों, प्रवचनों से नहीं मिलती तर्क-वितर्क से नहीं मिलती। बहुत पठित-स्मृतिवान होने से नहीं मिलता। जिसको यह वरण करती है (अपनाती है), उसी को प्राप्त होती है। उसके सामने आत्मा अपने स्वरूप को खोलकर रख देती है।

आत्मा निर्विकार, अखण्ड ज्योतिर्मय सत्ता के रूप में वर्णित है। भगवान् श्रीकृष्ण इसे अछेद्य, अभेद्य, न जलने वाला न गीला होने वाला आदि कहकर वर्णित करते हैं। फिर यह आत्मा किसी-किसी को कैसे वरण करती होगी ?

यहाँ भगवान् पातंजलि जी के योग सूत्र "पूर्वेषामपि गुरुः कालेनान अवच्छेदात" में सद्गुरु तत्व को अकाल, अनादि, अनन्त बताया गया है। यह सद्गुरुत्व जिस शरीर को अपना अधिष्ठान स्वीकार करता है वह शरीर उसके तेज से प्रकाशित हो उठता है। सद्गुरु ही जिसको अपना लेते हैं उसे अपने आत्मा का सम्पूर्णता से ज्ञान हो पाता है।

महात्मा यमाचार्य से आत्मा का ज्ञान नचिकेता को प्राप्त हुआ। इस आत्मा की अनुभूति इन चर्म चक्षुओं से नहीं हो सकती। ध्यान एवं समाधि द्वारा अज्ञान ग्रंथियाँ जब कट जाती हैं तो परमात्मा का दर्शन होता है। यही कठोपनिषद् का सार है।

हमारे बड़े गुरुभाई आदरणीय विनय मालवीय जी द्वारा लिखित "श्री गुरुगीता महात्म्य एवं योग दर्शन" नामक एक संक्षिप्त परन्तु अति गम्भीर रचना पढ़ने को मिली। सत्य परक चिन्तन एवं मनन के साथ सद्गुरु कृपा से ही ऐसे आलेख भाव जगत में अपना स्वयं स्वरूप निर्धारण करते हैं।

वे एक जगह लिखते हैं "श्री गुरुगीता में उसी सिद्धान्त का निरूपण किया गया है जिस पर चलकर जीव स्वयं ब्रह्ममय हो जाता है। वे पूछते हैं ? हममें से कितने लोग ऐसे हैं जिन्होंने भगवान् पातंजलि देव जी के "पुरुष विशेष" रूपी परमात्मा अथवा श्री सद्गुरु देव जी को तत्वतः जानने और पाने के उद्देश्य से दीक्षा ली है ? और अपने लक्ष्य प्राप्ति की ओर सतत् प्रयत्नरत हैं ? क्या हम-आप विचार एवं आत्मनिरीक्षण इस बात का करते हैं ? विरला ही कोई जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पाने हेतु कटिबद्ध हुआ करता है।

एक बार हमारे सहपाठी गुरुभाई ने श्री सद्गुरु भगवान के चरणों में पत्र भेजा उसमें उन्होंने बड़े ही दीन भाव से निवेदन किया था कि-प्रभो ! मैं अत्यन्त अपात्र हूँ न मंत्र, न ध्यान ही मुझसे बन पाता है। मन अत्यन्त चंचल है। मेरा क्या होगा ? श्री गुरुदेव जी का

अत्यन्त लाड भरा पत्रोत्तर उन्हें कुछ दिनों बाद प्राप्त हुआ। प्रभु जी ने लिखा था चिरन्जीव तुम मंत्र जाप, ध्यान नहीं कर पाते कोई बात नहीं इसी प्रकार यदा कदा पत्र लिखकर मुझे भेजते रहा करो। मैं तो अपने शिष्यों को स्मरण करता ही रहता हूँ। इतना प्यार और अभय का दान वे परात्पर श्री प्रभु जी ही दे सकते हैं। यही सद्‌गुरु की भक्तवत्सला की पराकाष्ठा है। पिता से माता सौ गुना करती सुत सो प्यार, माता से हरि सौ गुना, हरि से गुरु सौ बार" भक्तमयी परम योगिनी सहजोबाई का यह दोहा हम अपने प्रार्थना में नित्य गान करते हैं।

इस तथ्य की पुष्टि पुराण संदर्भों से भी की जा सकती है। युधिष्ठिर महाराज महाभारत युद्ध के दौरान एक दिन भगवान श्री कृष्ण के कैम्प में गये। उन्होंने देखा भगवान ध्यानस्थ हैं। वे इन्तजार करते रहे। जब भगवान श्री कृष्ण का ध्यान भंग हुआ तब धर्मराज ने साश्चर्य पूछा ! प्रभो ! संसार आपका ध्यान करता है, आप किसका ध्यान कर रहे थे ? भगवान ने कहा –धर्मराज ! मैं अपने असमर्थ–असक्त भक्तों को स्मरण करता हूँ। इस समय भीष्मपितामह नख से शिखा तक वाण विद्ध अत्यन्त पीड़ा से व्यथित हैं। अतः इस समय मैं उनका ही स्मरण कर रहा था। भगवान ने कहा चलो भाइयों के साथ उनके दर्शन करने। वहाँ पहुँच कर भगवान श्रीकृष्ण भीष्मपितामह से बोले – महामते ! इन पाण्डवों को उपदेश दीजिए।

पितामह ने कहा–भगवन ! मेरे सम्पूर्ण शरीर में बाण विंधे रहने से मैं चेतनाशून्य हो रहा हूँ। उपदेश कैसे करूँ ? इस पर योगेश्वर श्री कृष्ण ने अपना अमृतस्पर्शी कर उनके शरीर पर फिराकर उनकी समस्त पीड़ा हर ली। पुनः कहा–अब उपदेश करो।

पितामह ने हँस कर कहा–प्रभो ! सर्वज्ञान राशि आप यह क्यों कौतुक करते हैं। पहले मेरी पीड़ा हरी अब मुझे उपदेश करने को कहते हैं। आप स्वयं ही उपदेश क्यों नही करते ? भगवान ने कहा–पितामह ! मुझे अपनी कीर्ति से अपने भक्तों की कीर्ति अत्यधिक प्रिय है। मेरे सद्‌गुरु देव ऐसे ही अमानी, मान्यदा, मान्यदः हैं। अपने बालकों के छोटे से छोटे कृत्य पर कितने प्रमुदित होकर लोगों के सामने उसका मान बढ़ाया करते थे।

वैसे वाराह पुराण में स्वयं आदिनारायण रूप में भगवान वाराह पृथ्वी से कहते हैं :–

स्थिरे मनसि सुस्वस्थे शरीरे सति जो नरः।
धातु साम्ये स्थिते स्मर्ता विश्वरूपं च मां भजन।।
ततस्तं म्रीयमाणं तु काष्ठपाषाण संनिभम्।
अहं स्मरामि मद् भक्त नयामि परमां गतिम्।।

जो मेरा भक्त स्वस्थावस्था में निरन्तर मेरा स्मरण करता रहता है, उसे ही मरते समय

जब चेतना नहीं रहती और वह सूखे काष्ठ–पाषाण की भांति पड़ा रहकर कष्ट पाता मेरा चिन्तन करने में असमर्थ हो जाता है तो मैं उसका स्मरण करता हूँ और उसे परमगति मोक्ष की ओर ले जाता हूँ।

ये तो हुयी हरि की बात, सद्गुरु बात निराली। जो भी चलते, फिरते, उठते, बैठते सद्गुरु की चर्चा उनके उपदेश, उनके स्वरूप का बारम्बार स्मरण करने की आदत डाल लेते हैं वे महामान्य हैं, हम सबके पूज्य हैं। ऐसा ही सबमें सात्विक भाव का जागरण हो, यही मेरी प्रभु के पादपद्मों में पुनः पुनः प्रार्थना है।

✿ ✿ ✿

भजन

भूपेन्द्र 'अंकुश', जलेसर

चले अइयो प्रभू मेरे अंगना में।   टेक-
खिड़की खुलाऊँ दरवाजा खुलाऊँ
नाहीं किवारें मेरे जीना में।   चले अइयो-
चौका लिपाऊँ प्रभुजी अंगना लिपाऊँ
रौसें लिपाऊँ पूरे भवना में।   चले अइयो-
पलका बिछाऊँ तोशक तकिया लगाऊँ
चादर , बिछाऊँ लई फुंदना में।   चले अइयो-
दौड़ो ही जाऊँ पानी थाली में लाऊँ
पैंया धुलाऊँ मन मगना में।   चले अइयो-
ठन्डा पिलाऊँ प्रभुजी गर्म पिलाऊँ
भोजन कराऊँ ढोरूँ बिजना में।   चले अइयो-
मन भी गहाऊँ प्रभुजी तन भी गहाऊँ
धन भी गहाऊँ दान-दक्षिणा में।   चले अइयो-
'अंकुश' कहाऊँ प्रभुजी मास्टर कहाऊँ
भूपेन्द्र कहाऊँ रहूँ पटना में।   चले अइयो-

✿ ✿ ✿

विजयदशमी :

मेरे श्री गुरुदेव

प्रेषक–**कुंवर अनिल कुमार सिंह,** एडवोकेट (कछवा, मिरजापुर)

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्हम्।।

"हे भारत ! जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब ही मैं अपने रूप को रचता हूँ अर्थात् साकार रूप से लोगों के सम्मुख प्रकट होता हूँ।"

जब इस संसार में क्रमागत परिवर्तन तथा भिन्न–भिन्न परिस्थितियों के कारण नये–नये सामाजिक शक्ति सामंजस्य की आवश्यकता होती है उस समय एक शक्ति तरंग आती है और मानव जीवन अथवा मनुष्य के आध्यात्मिक तथा भौतिक क्षेत्रों में विचरण करने के कारण इन क्षेत्रों में इस तरंग का प्रभाव पड़ता है। इसी तरंग के रूप में तथा भगवान श्री कृष्ण की उक्ति के सार्थक रूप में हरियाणा प्रदेश के करनाल जिले के एक छोटे से गाँव "अलुपुर" में शुभ मुहूर्त में परम पावन दिवस विजयदशमी के दिन जन्म लेने वाले इस महान बालक के विषय में कोई कल्पना नहीं कर सकता था कि आने वाले इस युग में एक महान विश्वव्यापी योग मार्तण्ड के रूप में प्रतिष्ठित होकर सारे जग को प्रकाश देगा। ईश सत्ता हमेशा सादगी, पवित्रता, सत्यता एवं सच्चिरियता में ही प्रतिष्ठित रहती है. आपके पिताश्री पं० देवीराम शर्मा एवं माता श्रीमती चरती देवी थी। पिताश्री दृढतम् आर्य समाजी विचारों के थे तथा आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के एक योग्य व कुशल उपदेशक थे।

बाल्यकाल (बालक अवस्था) में ही बालक के साथ अखिलात्मा त्रिजग पावन भगवान श्रीकृष्ण बालक रूप में खेलने आया करते थे। खेलते समय यह बालक अपनी माँ से पूछता, माँ यह छोरा कहाँ का है, किसका है ? तो माँ कहती है बेटा तू खेल, यहाँ कोई छोरा–वोरा नहीं है। बालक के सिर पर टोपी में फरगल लगा था तो बालक के साथ खेलने वाले भगवान श्री कृष्ण के टोपी में लगा फरगल साफ सुथरे से तुलना करते हुए अपनी माँ से कहते है कि माँ वह छोरा जो मेरे साथ खेलता है उसकी टोपी में लगा फरगल मेरे फरगल से बहुत ही साफ है। माँ कहती है बेटा यहाँ कोई छोरा नहीं आता और तू कैसी बात करता है ? यहाँ कोई लड़का फरगल नहीं पहनता। माँ को क्या पता कि ये इन महान विभूति के साथ खेलने कौन आता है ?

इसी तरह बाल्यावस्था उत्तरोत्तर विकास की ओर बढ़ती हुई शिक्षा, दीक्षा, अन्यान्य संस्कार सम्पन्न होते हुए आगे भगवान श्री कृष्ण, भगवान शंकर की तपश्चर्या करते हुए एवं उनसे प्राप्त कृपाओं के फलस्वरूप अन्ततः एक दिन स्वप्न में इन्होंने पगड़ी–धारी स्वरूप

आनन्दकन्द श्री महाप्रभुजी को देखा कि एक कुएं पर डोर से पानी खींचकर तमाम प्यासों को तृप्त कर रहे हैं और इन्हें भी प्यास लगी और जब ये वहाँ पहुँचे तो पानी पिलाकर पुनः उन पगड़ीधारी स्वरूप ने इन्हें वह डोर व बाल्टी थमा दी कि आगे तुम प्यासों को तृप्त करो, इनके हाथों में डोर व बाल्टी आते ही प्यासों की संख्या अनगिनत बढ़ गई। पुनः दूसरे दिन स्वप्न में देखते हैं कि वही पगड़ीधारी स्वरूप इन्हें अपने पास बुला रहे हैं कि अब तू मेरे पास चला आ। तो इनके द्वारा आने का पता एवं स्थान पूछा जा रहा है। पुनः क्रमशः आगे व्यतीत होते क्रमानुसार घटनाओं के घटित होते एक दिन इनका श्री सिद्धयोग प्रशिक्षण आश्रम ऋषिकेश पहुँचना एवं वहाँ वही पगड़ी स्वरूप में बैठे महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज द्वारा हँसकर कहना कि तू आ गया तू तो कहता था कि कहाँ और कैसे, किस पते पर आना है ? इस प्रकार आगे इस बालक को पूर्ण सिद्ध योगी बनाकर अथवा अपने स्वरूप को ही इस बालक में स्थापित कर इस धराधाम में पीड़ित जन–समुदायों के जीवन को सार्थक बनाने हेतु भगवान श्री कृष्ण की उक्त वाणी को सार्थक करने हेतु अपने सम्पूर्ण जीवन को लगा दिया ऐसे है कर्मयोगी अखिल ब्रह्माण्ड नायक पूर्ण योगेश्वर योग मार्तण्ड योगी श्री चन्द्रमोहन जी महाराज मेरे गुरुदेव !

आनन्दकन्द श्री गुरुदेव जी इस मानव समुदायों के बीच से निकलकर जंगलों एवं पहाड़ों पर जाने का दृढ़निश्चय कर ऋषिकेश आश्रम से जब बाहर निकले तो उसी समय पोस्टमैन द्वारा एक लिफाफे का पकड़ाया जाना। पत्र इन्हीं के नाम था। पत्र में श्री महाप्रभु जी द्वारा आदेश कि चि० तुम जो अपना पैर आश्रम से बाहर निकाल रहे रहो उसे वापस कर लो, तुम्हारे से अभी बहुत काम लेना है, चि० हम तो बस्तियों, गाँवों मे घूम रहे हैं और तुम वनों, पहाड़ों की सोच रहे हो।" पत्र प्राप्त कर श्री गुरुदेव जी ने पुनः वापस आश्रम में आकर काफी पश्चाताप किया, कि यदि मैं यह गलती कर जाता तो अपने श्री गुरुदेव की आज्ञा का कितना बड़ा उल्लंघन होता। इसी के क्रम में आगे मेरे श्री गुरुदेव जी अपनी अन्तिम साँसों तक अखण्ड ज्योति श्री महाप्रभु जी की आज्ञा का पालन अर्थात 'सिद्धयोग' का प्रचार–प्रसार जन–जन तक करते रहे जो अविस्मरणीय है।

आनन्दकन्द श्री गुरुदेव जी ने अखण्ड ज्योति महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज के अमर सन्देश 'सिद्धयोग' को प्रचारित–प्रसारित करने के मुख्य स्थल का नाम 'श्री सिद्धगुफा' ही रखा। जो वास्तव में श्री प्रभुजी का ही स्थान है। मेरे श्री गुरुदेव जी ने कहा था कि इस सारे संसार में जितने भी योग आश्रम हैं सभी को किरण अथवा तेज मिलता है सिर्फ यहीं से अर्थात "श्री सिद्धगुफा" से। किसी को थोड़ा तो किसी को अधिक ! लेकिन मिलता है तो सिर्फ यहीं से !

आनन्दकन्द श्री गुरुदेव जी त्याग की साकार मूर्ति थे। यद्यपि जो पुरुष सन्यासी अथवा योगी होता है उसके लिये यह आवश्यक होता है कि वह सारी सांसारिक सम्पत्ति

तथा यश का त्याग कर दें। और मेरे श्री गुरुदेव जी ने इस सिद्धान्त का अक्षरशः पालन किया। परमयोगी श्री देवराहा बाबा के कैम्प शिविर में जब मेरे श्रीगुरुदेव पहुँचे तो योगी देवहारा बाबा द्वारा यह कहना कि–

"मेरे आराध्य आ गये, मेरे ऐश्वर्य आ गये।"

पुनः आगे कहते हैं–

"आप इस धराधाम पर इन मानव समुदाओं के बीच अपने को कैसे बनाए रखे हो; यह बात योगियों के बीच में बड़ा ही आश्चर्य का विषय है।"

वे अपने को एक साधारण धोती कुर्ता के बीच में अपने असाधारण रूप को छिपाये हुए हैं।

दूसरे मेरे श्री गुरुदेव के जीवन का महान तत्व अगाध प्रेम था। भारत वर्ष में भिन्न–भिन्न धार्मिक प्रचारक, सन्यासी अन्यान्य धर्म के लोग दर्शनार्थ आते थे। उन्हें मानव जाति के प्रति अगाध लगाव और प्रेम था कि उनके पास कृपालाभार्थ आने वाले हजारों हजार में से अत्यन्त सामान्य मनुष्य भी उस कृपा लाभ से वंचित नहीं रहता था।

योगविद्या के अमर तत्व को प्रकाशित कर मेरे श्री गुरुदेव जी ने हमसब मानव के जीवन को धन्य बना दिया। योग के सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक पक्ष दोनों का ही महत्व श्री गुरुदेव जी ने अपने मुखारविन्दों से समझाया है। आपने हमेशा ही ध्यानयोग की क्रियात्मकता पर बल दिया है। इसलिए ध्यान योग की महिमा सर्वोपरि है। गुरु उपदिष्ट होकर साधना करने से ही सफलता मिलती है। यदि हम गुरुपदिष्ट होकर ठीक प्रकार साधना करें तो योग की एक क्रिया ही पराकाष्ठा पर पहुँचा देती है।

आनन्दकन्द मेरे श्री गुरुदेव जी का संदेश कि "मनुष्य पूरा धनवान केवल योग से ही बनता है" **"यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।"** योग को ही पाकर मनुष्य सबसे धनी बनता है। मैं समझता हूँ कि हिन्दुओं के अतिरिक्त संसार में ईसाई, यहूदी, पारसी आदि–आदि धर्मों के उपासक भी योग को ही प्राप्त होते हैं तभी उन्हें ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। बिना योग के किसी को भी सत्य, ज्ञान, ईश्वर दर्शन एवं परम गति की प्राप्ति हो ही नहीं सकती। बड़े भाग्य से योग–मार्ग मिलता है। इसलिए होशियारी करो यदि तुम मेरे बच्चे हो, मेरी बात को मानते हो तो दो घण्टे मंत्र जप एवं एक घण्टा ध्यान का नियमित अभ्यास करते जाओ। अपने पुरुषार्थ में लगे रहो। इधर–उधर के झमेले में न पड़ो। अपना अमूल्य समय नष्ट करोगे यह बहुत बुरी बात हो गई। मनुष्य का जीवन बहुत कठिनाई से मिलता है। समय रहते अपने अभ्यास में लग जाओ और अपने आप को इस पवित्र मार्ग पर बढ़ाते जाओ। यदि ऐसा करोगे तो आनन्दकन्द श्री महाप्रभुजी की कृपा अवश्य होगी। वे अपने हर बच्चे को नैपाल हिमालय में बैठे–बैठे देखते हैं। इसलिए इन चरण कमलों का चिन्तन करो। सभी को बार–बार आशीर्वाद। ✿✿✿

विभूति मेरे गुरु की......

जगदीश राय बंसल 'अधम' (सोनीपत)

वभूति मेरे गुरु की कमाल करती।
कमाल करती रे कमाल करती
जिसने भी खाई उसको निहाल करती।।
निहाल करती रे निहाल करती
जिसने ये भभूति, जिह्वा में लगाई है
जादू से चिन्ता उसकी, दूर भगाई है
गुरु जी का ऊँचा, नाम करती। वभूति--

जड़ी बूटी का काम, वभूति करेगी
रोगी को खिला दो, रोग दूर करेगी
भक्तों के दिल में, यों ज्योति भरती। वभूति--

झगड़ा मुकद्मा, रज साफ कर दे
मियां बीबी, सारे घर में प्यार भर दे
रिश्ता नाता, सब काम करती। वभूति ---

जल से पिला दो ये, अमृत कर दे
श्रद्धा से चाटो, भूत प्रेत भगा दे
प्रतियागिता-परीक्षा सब पास करती। वभूति--

अज्मा के देखो, दुखड़ा दूर कर दे
कांटे हटा के, दिल में फूल भर दे
यह निर्धन को माला माल करती। वभूति--

देखो ये वभूति योग भरी है
गुफा प्रभु जी की तप स्थली है
धन्य है वह पूज्य माता चरती। वभूति--

सुबह-सुबह चाटो दिल शान्त रहेगा
गुरुजी की मानो, तेरा पाप धुलेगा
इस 'अधम' का बेड़ा पार करती। वभूति--

✲✲✲

श्री गुरुदेव के संस्मरण

प्रेषक : **केशव देव उपाध्याय**, वाराणसी

घटना सन् उन्नीस सौ चौरासी–पचासी नवम्बर माह की है। आराध्यदेव जी महाराज महानगरी कलकत्ता के कार्यक्रम में अपने पार्षदगणों के साथ योग प्रचार कार्य पर जाने वाले थे। सभी पार्षदगणों के साथ आराध्यदेव का आरक्षण कालका–हावड़ा मेल में था। आश्रमवासियों को आश्रम की पूरी व्यवस्था समझाकर अनाथनाथ कालका मेल को टुण्डला जक्शन पर पकड़ने हेतु सवाँई आश्रम पर मोटरगाड़ी में सवार हो चुके थे। कार ड्राइवर स्टार्ट भी कर चुका था। अनाथनाथ ने अपने मुखारविन्द से ड्राइवर को आदेश दिया कि लल्ला ! मैं अभी दो मिनट में आ रहा हूँ। गाड़ी से उतरने के बाद अनाथनाथ ने आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी के कन्धे पर अपना दाहिना हाथ रखा, जो गाड़ी के पास ही खड़े थे, एवं दस कदम दूर ले जाकर उनके कान में कुछ बातें कही। संयोग से मैं भी उस समय उपस्थित था। मेरे मन में यह बात आयी कि कौन सी ऐसी बात है कि श्री गुरुदेव भगवान ने इनसे गोपनीय ढंग से बतलाया है ? आराध्य देव के प्रस्थान करने के पश्चात् सायंकाल मैंने आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी से निवेदन किया कि आराध्यदेव जी ने आप को कौन सी रहस्य की बात बतलायी है ? उन्होंने प्रेम से कहा कि अभी तो तुम्हें कल रहना ही है। हमने उत्तर दिया कि हाँ, भाई जी हमें परसों जाना है। आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी ने कहा कि कल वह बात तुम्हें बतला दूँगा। उस दिन सायंकाल भाई जी ने आश्रम के एक ब्रह्मचारी साधक को लकड़हारे के पास भेजा एवं कहा कि लकड़हारे से यह कहना कि चार आदमी के साथ कुल्हाडी एवं आरा लेकर प्रातः दस बजे आश्रम पर आ जाय।

दूसरे दिन प्रातः काल लकड़हारा चार आदमियों के साथ आया तथा कुल्हाडी एवं आरा लेकर आ गया। आते ही उसने आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी से निवेदन किया कि दादा जी हमें कौन सी लकड़ी काटनी है। आदरणीय भाई जी ने उससे कहा कि मैं तुम्हें कौन सी लकड़ी काटनी है, पौने बारह बजे दिन में बतलाऊँगा। तब तक चाहो तो आराम करो या कहीं से टहल आओ। ठीक ग्यारह बजकर दस मिनट पर भाई जी श्री गुरुभवन के सामने स्थित कदम के पेड़ के नीचे बैठ गये एवं एकाग्र मन से श्री सिद्ध गुफा के ऊपर देखने लगे एवं श्री सिद्ध गुफा के दर्शनार्थियों को आधे घन्टे के लिये रोक दिये एवं कहा कि अब कोई गुफा के नजदीक न रहे, सब लोग दूर हट जाओ। ठीक ग्यारह बजकर

अठारह मिनट पर श्री सिद्ध गुफा के पीछे का एक नीम के पेड़ का हिस्सा श्री सिद्ध गुफा की ऊँचाई से ऊपर से चर–चर की आवाज के साथ ऐसे गिरा जैसे किसी ने उसे पकड़ कर धीरे–धीरे नीचे जमीन पर गिराया। यह समय था दिन के ग्यारह बजकर बीस मिनट का। पेड़ के जमीन पर गिरते ही आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी ने लकड़हारों को आवाज लगायी कि गिरे हुये पेड़ की लकड़ी काटकर फटाफट श्री सिद्ध गुफा से अलग करो। चारों लकड़हारों ने अथक परिश्रम करके, गिरे हुये पेड़ के टुकड़े–टुकड़े कर के श्री सिद्ध गुफा से दूर लगाकर रख दिये। सूर्यास्त के समय तक लकड़हारों का कार्य समाप्त हो गया था। आरती के बाद सायंकाल मैंने आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी से प्रश्न किया कि भाई जी ! अब तो बता दो, आराध्यदेव जी ने योग प्रचारार्थ जाने से पूर्व आप से क्या कहा था ? आदरणीय भाई ने बतलाया कि श्री गुरुदेव भगवान ने अपने मुखारविन्द से जाते समय, यही कहा था कि लल्ला ! कल दिन के ग्यारह बजकर बीस मिनट पर गुफा के पीछे का यह पेड़ (पेड़ की तरफ इशारा करते हुये) गिरेगा। तुम आज ही लकड़हारों को सहेज दो कि कल पेड़ गिरने के साथ ही उसके टुकड़े–टुकड़े करके गुफा से अलहदा कर देंगे। पेड़ गिरने से पूर्व यह रहस्य किसी को बतलाना नहीं तथा साथ ही इस बात का ध्यान रखना कि पेड़ गिरने के समय श्री सिद्ध गुफा के पास कोई न रह सके। इस प्रकार आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी ने श्री गुरुदेव भगवान की आज्ञा का अक्षरशः पालन किया। मुझे भी उन्होंने उस दिन इस रहस्य को न बतला कर, श्री आराध्यदेव जी की आज्ञा का पालन किया था एवं बाद में उपरोक्त रहस्य समझाया।

आदरणीय भाई जी के साथ घटित प्रभु कृपा की दूसरी घटना का वर्णन भी कुछ कम विलक्षण नहीं है। प्रसंग संभवतः सन् उन्नीस सौ तिरासी–चौरासी का है। आराध्य देव उस समय मिरजापुर जनपद के अन्तर्गत कछवा बाजार में अपने पार्षदगणों के साथ अपना योग प्रचार कार्यक्रम करने के लिये विराजमान थे। खूब अच्छी प्रकार से कछवा मण्डल का कार्यक्रम चल रहा था। यह समय जनवरी माह का था। आदरणीय भाई श्री रामाश्रय जी, दादा गुरुदेव परम योग–योगश्वर श्री रामलाल जी महाराज की सायंकालीन आरती के बाद भोजनालय में दादा गुरुदेव के भोग लगाने हेतु रोटी बना रहे थे। समय करीब साढ़े आठ बजे का था। उन्हें आराध्यदेव श्री सद्गुरुदेव जी महाराज की गगनभेदी स्पष्ट आवाज सुनायी दी। वह यह थी, "लल्ला रामाश्रय ! हमारे कमरे से सटे स्टोर में जाने के लिये चोर जीने (सीढ़ी) की कुण्डी काट रहे हैं।" श्री प्रभु जी की (श्री गुरुदेव भगवान की) यह आवाज सुनकर इन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। परन्तु इन्होंने सोचा कि शायद हमारे मन का भ्रम है, इस समय तो आराध्यदेव कछवा मण्डल में योग प्रचार का कार्य कर रहे हैं। उन्होंने उस वाणी

पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया एवं सोचा कि श्री प्रभु जी को भोग लगाने के बाद जीने का दरवाजा देख लूँगा। अभी यह विचार कर ही रहे थे कि फिर दुबारा वही गगन भेदी आवाज सुनायी दी। इस बार आवाज में कुछ विशेष आदेशात्मक शब्द थे एवं वह थे, "रामाश्रय ! हमारी आज्ञा की अवहेलना करता है। अभी जाकर देख, नहीं तो चोर सब सामान लेकर चले जायेंगे। दौडकर जल्दी जाओ।" इस बार की आज्ञा सुनकर भाई श्री रामाश्रय जी रोटी को आग में जलते हुये छोड़कर, लाठी लेकर जीने की तरफ, टार्च लेकर दौड़कर गये। चोरों ने जीने के दरवाजे की कुण्डी काट दी थी एवं स्टोर में प्रवेश कर गये होंगे, परन्तु इनके आने की आहट पाकर भाग गये। चोर स्टोर से कोई सामान नहीं ले जा सके थे। इस प्रकार आराध्यदेव जी के आदेश पालन करने से स्टोर में चोरी नहीं हो पायी।

सत्य संकल्प योगियों का कोई भी कार्य निरूद्देश्य नहीं हुआ करता। महिला स्नानागार के बगल में मुख्यद्वार की तरफ ट्यूबवेल लगाने के लिये कुंए की खुदायी हो रही थी एवं लगभग पन्द्रह फिट गहरी खुदायी हो गयी थी। उस समय आराध्यदेव जी ने भाई श्री रामाश्रय जी को आवाज लगायी। श्री रामाश्रय जी ने आवाज सुनते ही जाकर चरणों में प्रणाम किया। श्री मुख ने कहा, "चलो लल्ला ! बोरिंग का कार्य देखते हैं।" इतना कहकर वे श्री रामाश्रय भाई जी को साथ लेकर ट्यूबेल बनने वाले स्थान पर गये। जाने के साथ ही श्रीमुख ने आदेश दिया, सभी लोग कुंए से बाहर आ जाओ। पाँच मजदूर नीचे कार्य कर रहे थे। उन सबों ने कहा कि महाराज जी, पाइप निकाल कर बाहर आते हैं। श्री मुख ने कहा कि नहीं जल्दी बाहर आओ। वो सब मजदूर ज्योंही बाहर आये, आस–पास की मिट्टी धँसक कर पन्द्रह फिट गहरा कुंए का गड्ढा पट गया। इस प्रकार आराध्यदेव की आध्यात्मिक शक्ति द्वारा मजदूरों की प्राण रक्षा हो सकी। श्री गुरुगीता में इसीलिये तो लिखा है, **"नास्ति तत्वं गुरोपरम्।।"** ✿✿✿

शोक संवेदना

- आश्रम के ब्र. भीमदेव का ३१ अगस्त २००५ को देहान्त हो गया। उन्होंने श्रीगुरुदेव के समय गोशाला में कई वर्ष सेवा की। वे ७० वर्ष के थे। श्रीप्रभुजी उन्हें अपनी शरण में रखें।
- शिकोहाबाद निवासी प्रो. श्री भगवान अग्रवाल का गत २६ अगस्त २००५ को शरीरान्त हो गया। वे श्रीगुरुदेव के प्रिय बच्चों में से थे। श्री प्रभु उनके परिवार को इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति दें।

'सिद्धयोग' परिवार हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

मेरे गुरुदेव

लेखक - **कृष्ण कुमार पाण्डे** गोरखपुर

सिद्ध गुफा सवाई का पवित्र वातावरण। साधक समुदाय गुरुदेव के सम्मुख अपने-अपने कार्यक्रम में व्यस्त हैं। कहीं साधक ब्रह्मचारियों के निर्देश में आसन में लगे हैं। कुछ साधक रोग निवृत्ति हेतु विशेष आसन का अभ्यास कर रहे हैं। ऐसे भी साधक हैं जो हठयोग की क्रिया नेती, धौती, नौली आदि को कर रहे हैं। साधकों का एक ऐसा भी समुदाय है जो गायों की सेवा में लगा है। आश्रम की सफाई आदि भी चल रही है। सम्पूर्ण आश्रम क्षेत्र गुरुदेव के संरक्षण में कर्म में लगा है। आश्रम में पूरी लयता, एकाग्रता का वातारण है। आश्रम के समस्त कार्य समयबद्ध होते हैं। अन्त में होती है आरती, गीता पाठ, गुरुदेव प्रवचन, ध्यान, शंका समाधान, यौगिक चिकित्सा गुरुदेव का व्यक्तिगत कार्यक्रम, मध्यान्ह भोजन विश्राम। पुनः सायंकालीन सत्र सत्संग के साथ प्रारम्भ होता था। साधक समुदाय अपने मुखारविन्द से महाप्रभु के चरित्र, योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण के चरित्र का चिन्तन मनन करता है। स्वयं गुरुदेव भगवान की कृपा से कृतकृत्य साधक गाता है-

सिद्ध गुफा के कण-कण में छिपी है शक्ति अपार।
लुटा रहे हैं धीरे-धीरे चन्द्रमोहन सरकार।।
लीला उनकी समझ न आती हम अधमों को बारंबार।
किसको क्या कब दे देते हैं बैठे वे करतार।।

कितने गुढ़ार्थ भाव से युक्त भजन होते हैं। भजन गुरुदेव के प्रति भाव से गाकर साधक समुदाय आह्लादित हो उठता है। गुरुदेव के बोल में रस घोल उपदेश हैं। तभी तो साधक समुदाय गुरुदेव से दूर नहीं होना चाहता है।

सद्गुरु शक्ति साधक के जीवन को रूपान्तरित कर देती है। गुरुदेव अपने प्रवचनों में सदैव कहते रहते थे- अरे अपने गुरु की परीक्षा कर लो। निश्चित रूप से यह बात हर साधक के लिये विचारणीय थी। यह वाक्य साधक को साधन की शक्ति रूपी प्रेरणा से भर देने वाली होती थी। साधक महसूस करता था कि हमारे साधन में कदाचित कोई कमी है। जिससे गुरु के वास्तविक रूप को हम न जानकर मात्र अपने भौतिक सुख की पूर्ति करते चले जा रहे हैं। गुरु की वाणी अचिन्त्य शक्ति से युक्त होती है। जिसने समय पर समझा वह कृतार्थ हुआ नहीं तो शक्ति का धर्म है कही किसी रूप में प्रकाश करके निकल जाती है। साधक समझ पाता है कि नहीं, यह उसके साधन की समबद्धता और निष्ठा पर निश्चित है। हमारे मध्यकाल के संतो ने गुरुदेव की महिमा का इतना गुणगान किया है कि उनके

एक–एक भजन में गुरु की शाब्दिक झंकार सदैव दिखायी देती रहती है। संतों का जीवन बड़ा सरल सात्विक तथा मान और अपमान से परे का था। मिला तो खाया नहीं तो सो गये। संग्रह की प्रवृत्ति कहीं भी दिखायी नहीं देती है। सबसे बड़ी बात ये संत लोक कल्याण के लिए मात्र अवतरित थे। ऐसा लगता था मानो लोक कल्याण के अपने दायित्वों का बारी–बारी से निर्वहन करते हुए परम सत्ता के साथ तादाम्य स्थापित किए थे। मेरे गुरुदेव उसी श्रृंखला के नियामक थे। सिद्धगुफा से संबंधित साधक व अन्य समुदाय ने योग प्रचार के कार्यक्रमों में जिस किसी भी प्रकार गुरुदेव का दर्शन, स्पर्श, श्रवण का अवसर पाया कृतकृत्य हुआ। •

हम भौतिकवादी मनुष्य जिसकी चाह मात्र भौतिक सुख है। कितना इन योगियों और संतों को समझ पाये, यह कहना कठिन है। गीता कहती है– **''आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ''**। अर्थात् उत्तम कर्म करने वाले तथा कल्याण का भागी बनने वाले अर्थार्थी (भौतिक सुख) ''आर्त'' अर्थात् दुःख पड़ने वाले पर कल्याण के लिये हृदय में तीव्र संवेग, ''ज्ञानी'' अर्थात् जो यह जानता है कि यह शरीर आत्म कल्याण हेतु साधन है। वस्तुतः सद्‌गुरु को जानने के लिये जिज्ञासु, और ज्ञानी का पथ ही आत्म कल्याण का भागी बना सकता है। वैसे गुरुदेव साधक के किस क्रिया कलाप पर प्रसन्न हो जाते है कहना कठिन है। सच्चा साधक किसी न किसी रूप में समयानुसार पहुँच जाता है। जैसे स्वामी विवेकानन्द जी अपने गुरुदेव स्वामी रामकृष्ण परमहंस के पास एक गीत के माध्यम से मिले। स्वामी हरिदास को तानसेन (तन्ना उपनाम) ने आम के बाग में शेर की बोली बोलकर भयभीत कर दिया। पुनः पता चला कि एक बालक जिसका नाम तन्ना है। वह अपने बाग की रखवाली कर रहा है, उसने ही यह आवाज निकाली। संत हरिदास ने तन्ना की योग्यता और पात्रता पहचान ली। वे उसके माता–पिता से पूछ कर अपने साथ ले गये। जो आगे चलकर प्रसिद्ध संगीतज्ञ हुआ।

मेरे सत्संगी भाई गुरुदेव की कृपा को जानते हैं तथा अपनी प्रत्येक कामनाओं की पूर्ति कराते हैं। कुछ ऐसे भी साधक होंगे जिनको हम सब नहीं जानते होंगे कि गुरुदेव भगवान ने हिमालय की किस कन्दरा में उसे बैठाया होगा। कौन साधक लोक कल्याण के कार्यों में आज भी लगा है। कौन आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर है। मेरे सत्संगी भाइयों आज भौतिकवाद का बोलबाला है। हम अपने अस्तित्व के आत्मतत्व को भूलकर भौतिकता में फंसते चले जा रहे हैं। आज गुरुदेव की वाणी, उनके उपदेश, तथा मार्ग पर चलकर निश्चित ही भौतिकता से ऊपर जा सकते हैं। वैसे साधक समुदाय गुरुदेव की वाणी से हर प्रकार कृतकृत्य है तथा आज भी हो रहा है। हिन्दी में एक रहस्यवादी कविता है –

प्रिय तुम भूले मैं क्या गाऊँ, जिस ध्वनि में तुम बसे उसे,
जग के कण-कण में क्या बिखराऊँ ?

हमारी स्थिति साधन के अर्थों में ऐसी ही दिखती है। क्योंकि मनुष्य वर्तमान समय की परिस्थितियों से ग्रसित है। विभिन्न प्रकार के रोग अवसाद हमें घेरे रहती हैं। ऐसे में गुरुदेव द्वारा उपदेशित ये श्लोक ग्रहणीय है–

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मां शुचः।।

अर्थात् सभी धर्मों अथवा सम्पूर्ण कर्मों के आश्रम को त्यागकर केवल एक मुझ सच्चिदानन्द धन वासुदेव परमात्मा की ही अनन्यशरण अर्थात् (लज्जा, भय, मान, बड़ाई और आसक्ति को त्यागकर एक शरीर और संसार में अहंता ममता से रहित होकर केवल एक परमात्मा को ही परम आश्रय, परमगति और सर्वस्व समझना तथा अनन्य भाव से अतिशय श्रद्धा भक्ति और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान के नाम, गुण, प्रभाव और स्वरुप का चिन्तन करते रहना एवं भगवान का भजन, स्मरण रखते हुए ही उनकी आज्ञानुसार कर्तव्य कर्मों का निःस्वार्थ भाव से केवल परमेश्वर और गुरुदेव के लिए आचरण करना ही अनन्यशरण है) को प्राप्त होगा तथा सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा तू शोक मत कर। गीता के इस श्लोक पर गुरुदेव भगवान की वह वाणी सदैव चित्त में स्फुरित होती रहती है। किसी साधक ने गुरुदेव से पूछा–प्रभो साधन की विकटता से अथवा लापरवाही से चरणों से चित्त स्खलित होकर यदि भव सागर में भ्रमित होते रहे तो क्या होगा ? ऐसे में डूबने के अतिरिक्त कोई अवलम्बन नहीं होगा, मात्र आप का ही आश्रय होगा। गुरुदेव भगवान् हाथ के संकेतों से बोले – लल्ला हाथ नीचे लगाकर अपने शिष्यों को गुरुदेव भवसागर से ऊपर कर ही देते हैं। साधक को कल्याण का भागी बनने हेतु गुरुदेव अवसर प्रदान करते रहते हैं। इसी प्रसंग में किसी साधक ने पूछा–प्रभो मृत्यु भय लगा रहता है। गुरुदेव भगवान बोले–लल्ला मेरे साधक बच्चे ऐसे मरते चले गये तो मेरा कार्य कैसे होगा ? साधन की कमी है साधन करो कल्याण धन प्रभु सबकी रक्षा करते हैं। मुझे रामचरितमानस की पंक्ति याद आ गयी जब भगवान राम ने हनुमान से कहा–"प्रतिउपकार करों का तोरा, सन्मुख होइ न सकत मन मोरा"। ऐसे भक्त वत्सल भगवान हैं। गुरुदेव की वाणी साधकों के लिए निश्चित ही अमोघ है। आवश्यकता इस बात का है कि हम साधक समुदाय उसका कितना पालन कर रहे हैं। जितनी मात्रा में मेरा साधन होगा परिणाम भी उसी अनुपात में क्रमशः होता रहेगा। संस्कृत की उक्ति है–"**मृषा न जाय देव ऋषिवाणी**"। इसलिए गुरुदेव के उपदेश नित्य प्रासंगिक और उपयुक्त हैं। इस बात की आज आवश्यकता है कि साधक उस पथ का पथिक बनें।

जय गुरुदेव

✿ ✿ ✿

माता गोदावरी देवी के ध्यानानुभव

प्रेषक–आचार्य पूर्णचन्द पन्त

गुरुदेव के प्रथम दर्शन एवं योगदीक्षा

आदरणीया गुरु बहिन गोदावरी देवी जी मण्डी (हि० प्र०) की निवासी हैं। वे बड़ी सरल हृदय, भावुक और आस्तिक प्रकृति की हैं। उन्हें मण्डी वासी गुरु भाई–बहिन तथा अन्य सभी लोग माता जी कहकर पुकारते हैं। अतः प्रस्तुत लेख में उनके लिये माता जी शब्द का ही प्रयोग किया जा रहा है। अक्टूबर १६८६ में सद्गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के मण्डी के योग प्रचार कार्यक्रम में उन्हें गुरुदेव के प्रथम और अन्तिम दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके उस मनोहारी रूप के दर्शन करके और उनकी अमृतमयी वाणी सुनकर गोदावरी जी ने मन ही मन यह निश्चय कर लिया कि मुझे इन्हें अपना गुरु बना लेना चाहिए, क्योंकि इन जैसा दूसरा कोई गुरु मिलना बड़ा कठिन है। तभी से उनका मन दीक्षा के लिये व्याकुल हो उठा। उनके मन में एक ओर तो उत्सुकता बढ़ती गई और दूसरी ओर यह सोचकर वह निराश हो जाती कि कहीं ऐसा न हो कि गुरु जी मुझे दीक्षा ही न दें। आशा और निराशा के बीच दो दिन बीत गये। इस बीच वे सभी कार्यक्रमों में सम्मिलित होती रहीं और गुरुदेव के उपदेशामृत का पान करके आनन्दित होती रहीं। तीसरे दिन प्रातःकालीन आरती–पूजन एवं गीतापाठ के पश्चात् दीक्षाओं का कार्यक्रम था। माता जी ने दीक्षार्थियों की सूची में अपना नाम लिखवा दिया और पंक्ति में खड़ी होकर अपनी बारी की प्रतीक्षा करने लगी। वह अब भी मन ही मन भयभीत थी कि–कहीं गुरुजी उसे दीक्षा के लिये मना न करे दें।

वह पंक्ति में सबसे पीछे खड़ी थीं और वहाँ बारी–बारी से एक–एक व्यक्ति को दीक्षा के लिये पूजागृह में प्रवेश कराने की व्यवस्था की गई थी। ज्योंही दीक्षाएँ आरम्भ हुई घट–घट वासी श्री गुरुदेव ने सर्वप्रथम गोदावरी जी का ही नाम लेकर उन्हें अन्दर बुलाया। गुरुदेव के मुँह से एक अपरिचित महिला का नाम सुनकर वहाँ उपस्थित सब लोग आश्चर्य चकित रह गये। गोदावरी देवी अपने अगल–बगल तथा आगे–पीछे देखने लगी कि–कौन मुझे बुला रहा है। इतने में भक्त वत्सल श्री गुरुदेव ने दोबारा आवाज लगाई–गोदावरी आ जाओ ! गुरुदेव के श्रीमुख से अपना नाम सुनकर गोदावरी जी के

आश्चर्य एवं हर्ष की सीमा न रही और वे हड़बड़ाकर जल्दी–जल्दी अन्दर चली गईं। वे मन ही मन यह सोच रही थी कि गुरुजी को मेरा नाम किसने बताया होगा और यदि किसी ने भी न बताया हो तो ये सचमुच ही बहुत ऊँचे महात्मा हैं। वे ऐसा विचार कर ही रही थी कि गुरुजी के पास खड़े एक ब्रह्मचारी ने उन्हें गुरुजी के पास बैठाकर उनसे गुरु पूजन करवाया और उनके द्वारा लायी गई दीक्षा सामग्री गुरु जी को भेंट करवायी। तब गुरु जी ने उनके कान में गुरुमन्त्र का उपदेश किया। उन्होंने बोल–बोलकर उन्हें तीन बार मन्त्र सुनाया और पूछा–मन्त्र भूलोगी तो नहीं ? उन्होंने माता गोदावरी जी को ध्यान की विधि समझायी और कहा–इस मन्त्र का नियम पूर्वक रोज दो घण्टे जप करते रहना। जप के प्रभाव से ध्यान लगना आरम्भ हो जायेगा और सब प्रकार से कल्याण होगा। अगले दिन श्री गुरुदेव मण्डी का कार्यक्रम सम्पन्न कर वहाँ से प्रस्थान कर गये। गोदावरी जी को उनके दर्शन दोबारा नहीं हुए। क्योंकि मण्डी कार्यक्रम के कुछ महीने पश्चात् ही गुरुदेव ने अपना भौतिक देह त्याग दिया था। गोदावरी जी बड़ी दृढ़ता से गुरु आज्ञा का पालन करती रहीं और अगाध श्रद्धापूर्वक नियमानुवर्तिता से प्रतिदिन दो घण्टे अपने गुरु मन्त्र का जप करती रहीं जिसके फलस्वरूप तीन वर्ष पश्चात् उन्हें ध्यानानुभव होने आरम्भ हो गये और उनकी ध्यान स्थिति उत्तरोत्तर परिपक्व होती चली गई। उनके साथ बड़ी–बड़ी अद्भुत घटनायें घटित होती रही हैं। उन्हें ध्यान में सद्गुरु देव जी तथा श्री महाप्रभु जी के दर्शन प्रायः नित्य प्रति होते रहते हैं।

ध्यानानुभव

दिनांक १४–१–६५ को प्रातः ४ बजे जब माता जी ध्यान में बैठ रहीं थी तो बैठते ही उनका मन एकाग्र हो गया और वे ध्यानावस्था में तरह–तरह के दिव्य दृश्य देखती रहीं। थोड़ी देर बाद उनका मन श्री सद्गुरु चरणों में लीन हो गया। वे अपने आपको ऋषिकेश में गंगा जी के पावन तट (त्रिवेणी घाट) पर स्थित अनुभव करती हैं और उन्हें एक अत्यन्त मनोहारी दृश्य दिखाई देता है। वे देखती हैं कि–नीली साड़ी पहने तथा सोने का एक दिव्य कलश हाथों में थामें एक अनुपम सुन्दरी आकाश से उतरकर सीधे गंगा जी में प्रवेश करती है और स्नान करके बाहर निकल आती है। फिर देवी पार्वती सहित भगवान शंकर जी आकाश से उतरकर गंगा स्नान करते हैं और उनके पीछे योगेश्वर महाप्रभु रामलाल जी महाराज तथा सद्गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज उसी प्रकार आकाश से उतर कर गंगा जी में स्नान करते हैं। वे चारों अपार तेज से झिलमिला रहे थे। उनके तेज और

सौन्दर्य का वर्णन ही नहीं किया जा सकता था। जगदम्बा पार्वती जी बड़े दिव्य और रत्न जड़ित वस्त्राभूषणों से सुसज्जित थीं। महाप्रभु रामलाल जी जब जल में स्नान करने लगे तो उनकी सुनहरी जटायें जल में चारों ओर फैल गई। ऐसा मालूम पड़ता था कि– नदी का कोई भी भाग ऐसा नहीं है जहाँ उनकी जटायें न बिछी हों। स्नान के उपरान्त माता जी को आशीर्वाद देकर वे चारों अदृश्य हो गये। उन लोगों के अन्तर्धान होते ही माता जी का ध्यान टूट गया। उस दिन मकर संक्रान्ति का पावन पर्व था। माता जी को अपने घर पर ध्यान में बैठे–बैठे पुण्यतीर्थ ऋषिकेश, पतित पावनी गंगा जी, भगवान शंकर, योगेश्वर श्री प्रभुजी और भक्त वत्सल श्री गुरुदेव के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो गया, जो कि स्थूल रूप से पर्वस्नान की अपेक्षा कोटि गुणा अधिक फलदायी है।

ध्यान में समस्त देवी देवताओं के दर्शन

अप्रैल १९९६ की घटना है माता जी का ध्यानाभ्यास नियमित रूप से चल रहा था। वे प्रातः ४ बजे ध्यान में बैठ जाती थी और बैठते ही उन्हें श्री गुरुदेव एवं महाप्रभु रामलाल जी महाराज के दिव्य स्वरूप के दर्शन होने आरम्भ हो जाते थे। एक दिन ध्यान में उन्हें शंख, नगाड़े आदि की दिव्य ध्वनि सुनाई दी जो बड़ी चित्ताकर्षक थी। उसके बाद सभी देवी–देवता आकाश मार्ग से उतर–उतरकर उनके पूजा कक्ष में एकत्रित होने लगे उनमें सर्व प्रथम आदिदेव गणेश जी ने कक्ष के अन्दर प्रवेश किया। वे लाल रंग के कमल पुष्प पर विराजमान थे। उसके बाद भगवान शंकर और माता पार्वती, भगवान विष्णु एवं देवी महालक्ष्मी, देवी सरस्वती सहित ब्रह्मा जी तथा अन्यान्य सभी देवगण कक्ष में प्रवेश करते जाते हैं। सबसे पीछे श्री सद्गुरुदेव तथा योगेश्वर महाप्रभु रामलाल जी महाराज ने कक्ष के अन्दर प्रवेश किया। उन सबके तेज से वह कक्ष प्रकाश से जगमगा उठा। वह प्रकाश इतना तीव्र था कि ऐसा मालूम पड़ता था कि मानो करोड़ों सूर्य एक साथ उदित हो गये हों। श्री सद्गुरुदेव तथा महाप्रभु रामलाल जी महाराज के रोम–रोम से बड़ी शीतल और आनन्ददायक प्रकाश धारायें प्रवाहित हो रही थीं। देखते ही देखते वे दोनों उस स्थान पर विराजमान हो गये जहाँ उनके चित्र विराजमान कर रखे थे। उनके वहाँ बैठते ही दोनों चित्र वहाँ से गायब हो गये। इस प्रकार वे उन चित्रों के अन्दर ही समा गये। सभी देवी–देवताओं ने गद्गद् होकर श्री महाप्रभु जी की आरती उतारी और उन्होंने प्रसन्न होकर सबको आशीर्वाद दिया।

ध्यान में जीव समाप्ति की सूचना देना और बाद में आयु बढ़ा देना

अप्रैल १९९७ की घटना है। उन दिनों माता जी का स्वास्थ्य कुछ खराब चल रहा था

फिर भी वे कई–कई घण्टे तक एक आसन में बैठकर मन्त्रजप और ध्यानाभ्यास किया करती थीं। एक दिन प्रातः काल जब वे ध्यान में बैठी तो बैठते ही उनका मन एकाग्र हो गया और कई प्रकार के अद्‌भुत दृश्य उन्हें दिखाई दिये। ध्यान में उन्हें श्री गुरुदेव के दर्शन भी हुए। वे माता जी की ओर देखते हुए गम्भीर वाणी से बोले–गोदावरी ! तुम्हारी तो आयु समाप्त हो चुकी है फिर भी हम कुछ वर्षों के लिए तुम्हारी आयु और बढ़ा देते हैं। अब तुम इसका पूरा–पूरा लाभ उठाना एक क्षण भी व्यर्थ मत जाने देना। इतना कहकर श्री गुरुदेव अन्तर्धान हो गये और उसके साथ ही माता जी का ध्यान भी टूट गया। उसी दिन से माता जी पूरा तरह स्वस्थ हो गईं।

गिर जाने की भविष्यवाणी करना और गिरने पर उनकी रक्षा करना

एक दिन गुरुदेव ने ध्यान में दर्शन देकर माता जी से कहा–गोदावरी ! तुम्हारे गिरकर टाँग टूटने का संस्कार है। इसलिए आनन्दकन्द श्री प्रभु जी का हर समय चिन्तन करती रहा करो। उनकी कृपा से तुम्हारी रक्षा तो हो जायेगी, संस्कार का भुगतान भी सूक्ष्म में हो जायेगा। वे सिद्धयोग आश्रम मण्डी में नियमित रूप से ध्यानाभ्यास किया करती थीं। उपरोक्त भविष्यवाणी के कुछ ही दिन पश्चात् वे आश्रम की सीढ़ियाँ उतरते हुए अचानक गिर गईं और उनके पैर में चोट आ गई। चोट बहुत अधिक तो नहीं लगी फिर भी उन्हें चार महीने तक कुछ कष्ट रहा। श्री गुरुदेव ने उस संस्कार का सूक्ष्म में भुगतान करा दिया और चार महीने बाद उनका पैर पूरी तरह ठीक हो गया।

निर्माण कार्य में बाधा उपस्थित होने पर श्री गुरुदेव द्वारा सहायता

एक गुरु बहिन के घर पर कुछ निर्माण कार्य चल रहा था। जिसमें एक शौचालय का कमरा भी था। नीचे एक बहुत बड़ा चट्टाननुमा पत्थर होने के कारण वहाँ सीट ठीक नहीं बैठ पा रही थी अतः वहाँ खुदाई करके उस पत्थर को निकालने की योजना बनाई गई। एक घण्टे में बड़ी कठिनता से वह पत्थर बाहर निकल पाया। माता जी उस समय अपने घर में ध्यान में बैठी हुई थीं। उन्होंने ध्यान में देखा कि–श्री गुरुदेव लाठी लेकर उस स्थान पर तब तक खड़े रहे जब तक वह पत्थर नहीं निकल गया। पत्थर के नीचे एक पोटली में कुछ जादू–टोना करके दबाया हुआ था। श्री गुरुदेव ने वह पोटली निकलवा दी और यह कहकर अदृश्य हो गये कि–इसे बहते पानी में प्रवाहित कर देना। माता जी ध्यान से उठकर सीधे उस स्थान पर गईं जहाँ निर्माण कार्य चल रहा था। उन्होंने उस भारी भरकम पत्थर को देखा जो अब गढ्ढे से बाहर निकाला जा चुका था। तब उन्होंने गड्ढे के अन्दर

की मिट्टी को टटोला तो उन्हें वह पोटली मिल गई जो उन्हें गुरुदेव ने ध्यान में दिखाई थी। उन्होंने मकान वालों को वह पोटली सौंप दी और गुरुदेव के आदेशानुसार उसे बहते पानी में प्रवाहित करवा दिया।

ध्यान में ही श्री सिद्धगुफा संवाई तथा योग साधन आश्रम ऋषिकेश के दर्शन कर लेना

माता जी अब तक सिद्धगुफा संवाई नहीं गई थीं। अतः उन्हें आश्रम का परिसर, गुफा, गुरुभवन, यज्ञशाला, भोजनालय आदि के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। आज से पाँच वर्ष पूर्व उन्हें ध्यान में संवाई धाम के दर्शन हुए, जिसमें उन्हें वहाँ के बारे में पूरी जानकारी मिल गई, यहाँ तक कि आश्रम में प्रयोग किये जाने वाले हाथ के बड़े–बड़े पंखे भी उन्हें ध्यान में दिखाई दिये। इसी प्रकार योग साधन आश्रम ऋषिकेश के भी ध्यानावस्था में ही उन्हें प्रथम बार दर्शन हुए थे। इस घटना के कुछ महीने पश्चात् उन्हें श्री सिद्धगुफा संवाई और योग साधन आश्रम ऋषिकेश जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। दोनों ही पवित्र धामों के दर्शन करके उनके हर्ष और आश्चर्य का ठिकाना न रहा। क्योंकि वे दोनों स्थान बिल्कुल वैसे ही थे जैसा उन्होंने ध्यानावस्था में देखा था। (क्रमशः)

✿ ✿ ✿

न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नातिविश्वसेत्।
विश्वासाद् भयमुत्पन्नं मूलान्यपि निकृन्तति।।

(विदुरनीति)

जो विश्वास का पात्र नहीं है, उसका तो विश्वास करे ही नहीं, किन्तु जो विश्वासपात्र है, उस पर भी अधिक विश्वास न करे। विश्वास से जो भय उत्पन्न होता है, वह मूल का भी उच्छेद कर डालता है।

श्री महाप्रभु जी का सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में योगदान

–अवनीश भटनागर (सहारनपुर)

जैसा कि आप विज्ञ पाठक जनों ने हमारे पिछले लेख "महाप्रभुजी का चिकित्सा क्षेत्र में विशेष योगदान" का अध्ययन किया। हमारा प्रयास करूणावतार योगीश्वर श्री रामलाल महाप्रभुजी की गोपनीय लीलायें जो प्रायः चर्चा में नहीं आ पाती हैं या सभी लोग नहीं जानते हैं ऐसे अधिकांश लीला चरित्रों को "श्री महाप्रभुजी के विशेष योगदान" नामक श्रृंखला में प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे सभी श्रद्धालु पाठक जन श्री रामलाल महाप्रभु जी के दिव्यलीला चरित्रों का रस पान कर सकें और यह जान सकें कि हमारे परम दयालु महाप्रभु श्री रामलाल जी ने संसार में कितने बड़े–बड़े एवं विलक्षण कार्य किये और श्री महाप्रभु जी ने ही आध्यात्मिक यौगिक जगत को नींव के पत्थर प्रदान किये जिस पर ही वर्तमान में आध्यात्मिकता का मन्दिर विद्यमान है और विश्व को दिव्य उर्जा प्राप्त हो रही है। इस बार प्रस्तुत लेख में महाप्रभु श्री रामलाल जी का सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में विशेष योगदान पर कुछ लीला चरित्र प्रस्तुत हैं।

भगवान ने गीता में ईश्वरीय रूप की रचना के तीन कारण बताये हैं– **परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुश्कृतां, धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे-युगे।** योगीश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी इन तीनों कारणों को लेकर संसार में प्रादुर्भूत हुये उन्होंने प्रथम कारण परित्राणाय साधूनां के अन्तर्गत परम कृपा करके शुभ संस्कारी आत्माओं को तीव्रतम शक्तिपात देकर साधारण जीवन से उठाकर परम ज्योर्तिमय बना दिया और संसार में उनका पूज्यनीय स्थान बना दिया जैसे योगिराज हरिहरानन्द जी की एक बात से प्रसन्न होकर श्री महाप्रभु जी ने तीव्र शक्ति संचार देकर तत्वविजयी अमर महासिद्ध बना दिया, योगिराज गोपालानन्द जी को श्री महाप्रभु जी ने सहारनपुर में तीव्रशक्तिपात देकर ब्रह्मदर्शन कराकर दिव्य योग विद्या के प्रचार प्रसार का माध्यम बना दिया और साथ ही एक ऐसी दिव्यानन्द मयी संकीर्तन ध्वनि आध्यात्मिक जगत को प्रदान की जिसको सारे विश्व में हिंदू लोग गाकर झूम उठते हैं और श्री कृष्ण प्रेम में समा जाते हैं। वह ध्वनि है–गोविन्द जै जै, गोपाल जै जै। स्वामी मुलखराज जी को महाप्रभुजी ने शक्ति संचार देकर परम दुर्लभ तुर्यावस्था को तेरह वर्ष तक प्रदान किये रखा।

योगेश्वर श्रीचन्द्रमोहन जी को तीव्र शक्ति संचार देकर दिव्य सिद्धयोग में परिपूर्णता

प्रदान कर अपना ही स्वरूप बना दिया और विश्व में सद्गुरु रूप में योग प्रचार करने का महान अधिकार प्रदान किया। पूज्यपाद देवरहा बाबा को दिव्य संचार देकर खेचर सिद्ध बना दिया, यह सब उन सर्वशक्तिमान महाप्रभु श्री रामलाल ने एक दृष्टिपात में ही कर दिया और यौगिक जगत में एक क्रान्ति ला दी। दूसरा कारण विनाशाय च दुश्कृतां के अन्तर्गत श्री रामलाल महाप्रभुजी ने अनेकों ऐसी दुश्चरित्र आत्माओं का भी परित्राण किया जो संसार में अति पतित कार्य कर रही थी उनको भी दिव्य शक्तिपात देकर पतित जीवन से उत्थान करके ज्योतिर्मय बना दिया और प्रकाश स्तम्भ की भाँति स्थापित कर दिया जिन्होंने आगे चलकर आध्यात्मिक प्रकाश जगत को दिया। जैसे रामरती जो अति पतित कार्य करने वाली मदिरापान करने वाली व्यभिचारिणी स्त्री थी। श्री रामलाल महाप्रभुजी का दिव्य शक्तिपात मिलते ही वह बारह वर्ष के लिए समाधिस्थ हो गई और वह देवी दुर्गा की भाँति पूज्यनीय हो गई उनकी सेवा करने वाले मनोइच्छित वर प्राप्त करने लगे इससे चहुँ ओर उसकी ख्याति फैल गई। ब्रह्मघातिनी पापिन बिजना भी अपने अति बुरे कर्मों से कोढ़िन हो गई और आगे चलकर किसी पुण्यात्मा के कारण से श्री रामलाल महाप्रभु जी के दिव्य शक्ति संचार की भागी बनी और योग की उच्चावस्था को प्राप्त हो गई जिससे जगत में अनेकों यौगिक चमत्कारों का कारण बनी और जगत में पूज्यनीय स्थान प्राप्त किया। चरित्रहीन साँई दास का भी श्री महाप्रभु जी ने दिव्य शक्तिपात देकर पूर्ण उत्थान किया था। धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे तीसरा कारण धर्म की पुर्नस्थापना है। श्री रामलाल महाप्रभुजी ने लुप्तप्रायः योगविद्या रूपी धर्म को अपना दिव्य शक्ति संचार देकर पुर्नस्थापित किया जिससे उनके समय से लेकर अब तक न जाने कितने लोग योग विद्या से लाभान्वित हो चुके हैं और आगे चलकर न जाने कितने असंख्य व्यक्ति उनके द्वारा पुर्नस्थापित सिद्धयोग विद्या से लाभान्वित होंगे– इस सबका श्रेय परम योगीश्वर श्री रामलाल महाप्रभु जी को ही है।

सामाजिक क्षेत्र में महाप्रभु श्री रामलाल जी ने अनेकों कल्याण कार्य किये। समाज में मानवीय गुणों का निरंतर ह्रास हो रहा था। महात्मा लोग भी भगवा चोला धारण करने वाले ही रह गये थे। महात्माओं वाली अन्दर की कमाई करना उनके वश से बाहर हो गया था। श्री महाप्रभुजी ने दिव्य शक्ति संचार देकर साधारण वेश में ही बड़ी–बड़ी महात्मा शक्तियों का विकास किया जैसे सद्गुरुदेव महाप्रभु श्री चन्द्रमोहन जी, स्वामी मुलखराज जी, श्री नरसिंह मूर्ति जी, माता द्रोपदीदेवी जी, महात्मा ऋषिदेवी जी आदि सब साधारण ग्रहस्थ वेश में ही महान शक्तियाँ थी। समाज कल्याण के क्षेत्र में महाप्रभु श्री रामलाल जी ने मील के पत्थर स्थापित किये और साथ ही ऐसे क्रान्तिकारी कदम उठाये जिससे समाज में फैली

अनेक कुरीतियों को तो जड़–मूल से ही नष्ट कर दिया। उन्होंने अनेकों जनकल्याण कार्यों को एक साथ ही कर दिया। चाहे फिर उन्हें अनेक शरीर ही धारण क्यों न करने पड़े वह एक ही समय पर अन्यान्य स्थानों पर भी प्रकट रहे और कल्याण कार्य करते रहे। श्री महाप्रभु जी ने कुरीतियों के उन्मूलन एवं जगत कल्याण के लिय भारत भ्रमण, नर्मदा के वना की अति दुर्गम यात्रायें एवं सुदूर आसाम के दुर्गम बीहड़ इलाकों की कष्टकारी यात्रायें की और कुरीतियों को दूर करके संस्कारी भक्तों का कल्याण किया। आसाम के अन्दर भगवती कामाख्या का सिद्धपीठ है, भगवती कामाख्या तन्त्र मन्त्र में सिद्धि प्रदान करने वाली देवी हैं। समस्त कामरून देश तन्त्र मन्त्र से उस समय आच्छादित था। लोग जरा–जरा सी बात पर तन्त्र मन्त्र का गलत प्रयोग करके एक दूसरे को पीड़ित कर दिया करते थे। श्रीमहाप्रभु जी के श्री चरणों में रहते अनेक ऐसे तान्त्रिक एवं अवधूतनियाँ हरिहरानंद जी से गुरु कृपा से परास्त हो चुके थे। परमयोगीश्वर श्री रामलाल जी एक योगिनी पर कृपा करने जो अवधूतनी के रूप में रहती थी, आसाम प्रदेश के गोहाटी शहर में पधारे और उस योगिनी पर दिव्य शक्तिपात करके कैवल्य की ओर अग्रसर किया। वह योगिनी पहले से ही अपने पूर्व गुरु के आदेशानुसार करुणानिधान श्री महाप्रभुजी की प्रतीक्षा कर रही थी। आसामन में उस समय भाँति–भाँति के तन्त्र मन्त्र प्रचालित थे। लोग अपने अनुकूल कार्य नहीं होने पर तन्त्र मन्त्र का प्रहार करके मनुष्य को पीड़ित करके उसे रोगी बना कर अपने आधीन कर लेते थे। श्री हरिहरानंद जी को भी खरबूजा खा लेने पर एक तान्त्रिक बुढ़िया ने बकरे की भाँति ब–ब करने वाला बना दिया था। फिर श्री महाप्रभु जी ने बु[illegible] का शक्तिहरण करके हरिहरानंद जी को छुड़ाया था। तन्त्र मन्त्र का इतना गलत प्रयोग देखकर दयानिधान महाप्रभु जी का हृदय दयार्द्र हो उठा और वह हजारों कष्ट उठा कर भी कुरीतियों को दूर करने आसाम पधारे। आसाम के राजा रणसिंह ने श्री महाप्रभु जी की चरण शरण ग्रहण की और श्री महाप्रभु जी को आसाम राज्य का राजगुरु बना कर बहुत सम्मान दिया। समाज के अन्दर फैली तन्त्र मन्त्र के गलत प्रयोग रूपी कुरीति को श्री महाप्रभु जी ने अपने शुभ प्रयासों से उन्मूलित किया।

उस समय वाम मार्गियों ने भैरवी चक्र का गलत प्रयोग प्रारम्भ किया हुआ था। जिसमें स्त्री पुरुषों के समाज के बीच एक खोपड़ी में दीपक जलाकर रख देते थे और पंच मकार (मीन, मुद्रा, मैथुन, मांस, मदिरा) का सेवन करते थे जिससे समाज में व्याभिचार फैल रहा था। स्त्री और पुरुषों में इससे व्याभिचार का प्रसार हो रहा था। वाममार्गियों को धर्म मार्ग से पतित देखकर जहाँ–जहाँ भी भैरवी चक्र का आयोजन होता वहीं पर दूसरा रूप धारण करके प्रकट हो जाते और भैरवी चक्र को प्रभावहीन कर देते। इस प्रकार उन्होंने भैरवी

चक्र को सदा–सदा के लिये प्रभावहीन कर दिया और सभी वाममार्गियों ने श्री महाप्रभु जी की चरण शरण ग्रहण की। जिससे हजारों नर नारियों के पवित्र जीवन की रक्षा हो सकी और अन्त में उन्होंने श्री महाप्रभु जी की चरण शरण ग्रहण की। श्रीमहाप्रभु जी ने समाज में अनेकों युवकों को ब्रह्मचर्य की ओर अग्रसर किया।

उस समय भारत भर में अनेकों स्थानों पर बलि प्रथा बहुतायत से प्रचलित थी। परमयोगीश्वर श्री रामलाल जी ने ऐसे सभी स्थानों पर पहुँच कर तत्कालीन पंडे पुजारियों से शास्त्रार्थ करके दिव्य शक्तिपात के द्वारा सभी स्थानों से बलि प्रथा को बन्द करा दिया। योगीश्वर महाप्रभु जी के अथक प्रयासों से ही भारत में बलि प्रथा बहुतायत से प्रचालित होते हुये भी उन्होंने अपने दिव्य प्रयास से उसे निर्मूल कर दिया। अब यह प्रथा ना के बराबर ही भारत में कहीं–कहीं दिखाई देती है। आमतौर से नहीं। बलि प्रथा को दूर करने के मूल नायक महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज ही हैं।

राजनीति और राजनीतिज्ञों में श्री महाप्रभु जी की रुचि प्रायः न के बराबर ही रही। फिर भी श्री महाप्रभुजी की ख्याति सुनकर तत्कालीन अनेक बड़े–बड़े अंग्रेज पदाधिकारी उनकी शरण में आते रहे थे। कुछ ने तो योग साधन आदि भी सीखे थे। राज्य एवं राजनीति से श्री महाप्रभुजी दूर ही रहे। फिर भी जम्मू कश्मीर के महाराजा हरीसिंह जी ने श्री महाप्रभु जी से योग दीक्षा ली थी। श्री महाप्रभुजी महाराजा हरिसिंह के राजमहल में भी जाया करते थे। और अन्य राज्य आसाम, नैपाल, कांठ आदि रियासतों के महाराजाओं ने श्री महाप्रभुजी की प्रभुता को पहिचान कर अपने यहाँ राजगुरु का पद एवं सम्मान दिया। भारतीय राजनीति में जो फैसला आगे चलकर होना था श्री महाप्रभु जी ने उसे लगभग बाहर वर्ष पूर्व ही भविष्यवाणी करके बता दिया था कि लाहौर के आश्रम को और मत बढ़ाओ वहाँ यह रहने वाला नहीं आने वाले समय में तो जो कुछ वहाँ बनाया है उसे भी छोड़ कर भागना पड़ेगा। स्मरण रहे कि श्री महाप्रभुजी ने सन् १६३८ में महाप्रयाण किया था और १६४७ में नौ वर्ष पश्चात् पाकिस्तान बना। शरीर छोड़ने से भी ३–४ वर्ष पूर्व ही उन्होंने सब बातें बता दी थीं। समय आया भीषण मारकाट मची। पाकिस्तान बना बने बनाये घर छोड़कर लोगों को वहाँ से भागना पड़ा। श्री महाप्रभु जी की भविष्यवाणी सत्य हुई। ऐसे विपत्तिकाल में श्री महाप्रभु जी ने अपने अनेक भक्तों की जो पाकिस्तान में दंगों में फंस गये थे, दिव्य रूप धारण करके उनकी रक्षा की और सुरक्षित भारत की सीमा में पहुँचाया।

✿ ✿ ✿

इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम ....

—राजेश कुमार श्रीवास्तव (राजू)

मेरी क्षुद्र वासनाओं के
कारण मुझे भुला दो
इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम
जो मुझको ठुकरा दो।

कितने दिन हो चले
आपने दर्शन नहीं दिये हैं
पहले सी अब बात नहीं
दिन यूँ ही बीत रहे हैं।

मेरे स्वार्थपूर्ण प्रेम के
कारण मुझे सजा दो
इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम
जो मुझको ठुकरा दो।

रज-तम ने मेरे स्वभाव
को कितना हठी बनाया
आज्ञापालन के मौके पर
हर मन में भ्रम आया।

संशय से निश्चित विनाश
जो अपनी आँख हटा दो
इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम
जो मुझको ठुकरा दो।

मंगामल से दुष्ट चरित्र
भी पास तुम्हारे आये
घोर कुकर्मी गुरु निन्दक
को भी प्रभु तुम अपनाये।

फिर हम क्यों न तरेंगे !
मन में, यह विश्वास जमा दो
इतने निष्ठुर नहीं प्रभु तुम
जो मुझको ठुकरा दो।

साधु-असाधु हेतु 'योग पथ'
तुमने ही तो रचा है।
'कृपा' से जीवन समझ सका
तब, पथ ही नहीं बचा है

चरणों की सेवा में
'पथ' को थोड़ा और बढ़ा दो
इतने निष्ठुर नहीं प्रभु
तुम, जो मुझको ठुकरा दो।

प्रभु चरणों में समर्पित

–राजेश कुमार श्रीवास्तव (बलिया)

हे योगीराज प्रभु चन्द्रमोहन जी
हे मेरे भगवान;
तुम्हें जन्म दिवस के विजय पर्व पर
बारम्बार प्रणाम।

तुम्हीं पालक, तुम्हीं पोषक, तुम्हीं अन्तर्यामी हो,
क्या जड़ जंगम, क्या जड़-चेतन, तुम्हीं जग के स्वामी हो;
श्री देवी राम प्रभु अजिर बिहारी, मां धरती के नंदन हो,
परम पिता परमेश्वर तुम्हीं, मेरे अलख निरंजन हो;
मन भावन पावन नाम तुम्हारा,
मधुर तेरी मुस्कान। तुम्हें जन्म दिवस.......

सत् का बोध कराने वाले, तम को दूर भगाते हो,
जो मन से हो गया तुम्हारा, उसको गले लगाते हो,
भक्तों के रक्षक बन प्रहरी, अहंकार को खाते हो,
गुरु-शिष्य के रिस्ते को, हर क्षण आप निभाते हो;
प्राणों से प्यारे भक्तों का,
अमर है तेरा नाम। तुम्हें जन्म दिवस.......

आसुरी शक्तियां जाग रहीं, धनुष-बाण फिर धारो तुम,
जीवन का अभिशाप बना जो, उस रावण को मारो तुम,
अर्जुन को केशव, गीता का, फिर उपदेश सुनाओ तुम,
त्राहि-त्राहि है मची हुई, युग की पीर मिटाओ तुम,
सतयुग, त्रेता, द्वापर और,
हो कलि के घनश्याम। तुम्हें जन्म दिवस.......

नारद-शारद शेष सभी ने, तेरा ही गुण गाया है,
तुलसी, सूर, कबीर, मीरा ने, नाम जपा सुख पाया है,
खाली हाथ गया न घर को, तेरे दर जो आया है,
बाल न बांका होता उसका, जिसको तुमने अपनाया है।
आ राजेश, मन मंदिर में बैठो,
हर पल आठो याम। तुम्हें जन्म दिवस.......

श्री रामलाल प्रभवे नमः

वेदव्रत द्विवेदी (उमापुर)

योगयोगेश्वर महाप्रभु की महिमा बड़ी निराली।
शेष शारदा त्रिभुवन पति जिनकी करते रखवाली।।
जिनके पावन दिव्य नाम में अद्भुत शक्ति संचार हुआ।
उनके परम प्रिय शिष्य श्री चन्द्रमोहन जी का अवतार हुआ।।
ऋषि मुनि हारे ध्यान लगाकर नहिं पार किसी पाया।
शरणागत होकर शुद्ध हृदय से जिसने भी अपनाया।।
जो बन गया चरणों का चरण गामिनी वह अनुपम लाभ उठाया।
महाप्रभु श्री रामलाल जी का जिसने भी गुण गाया।।
नारायण दास को महाप्रभु ने सहज समाधि दे डाली।
जिन के चरणामृत को पीकर भक्तों ने मुक्ति पा ली।।
बाल कृष्ण वैष्णव महात्मा महाप्रभु के चरणों में नित आते जाते थे।
दर्शन पाकर महाप्रभु का, अपना जीवन धन्य बनाते थे।।
वह वैरागी रहा खड़ा मूक बनकर भक्ति भाव से दोनों कर जोड़ लिया।
योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी ने दीक्षा कर शक्ति पात किया।।
बाल वैरागी ध्यानास्थ हुआ भूत भविष्य सब उच्चार किया।
राशि प्रथा मित्तल बनी योगिनि चरणों का ध्यान किया कैसे।
गुरुदेव शरणं-गुरुदेव शरणं कह-कहकर यह महा मन्त्र उद्घोष किया।।
देवरिया जिले का एक संत महाप्रभु के चरणों में आया था।
महा प्रभु जी ने दीक्षाकर खेचरी सिद्ध कराया था।।
देवरहा बाबा नाम हुआ पवनाभ्यासी संत हुए।
आकाश गमन में चलने की शक्ति से आबाद हुए।।
बिहार प्रान्त के जमुनियाँ घाट पर एक दुष्चरित्र महिला रहती थी।
रामरती पापचारिनी विलासिता पूर्ण जीवन जीकर मदिरा पान करती थी।।
महाप्रभु ने शक्ति पात कर उसे अखण्ड समाधि दे डाली।
रामरती अधमानारी को सिद्ध परम योगिनी बना दिया।।
योगयोगेश्वर महाप्रभु की महिमा बड़ी निराली।
शेष शारदा त्रिभुवन पति जिनकी करते रखवाली।।

✿ ✿ ✿

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–

उत्तिष्ठत् जाग्रत !

साधना आरम्भ करने से पहले मन में जितने प्रकार के सन्देह आ सकते हैं, सब भंजन कर लीजिये। युक्ति, तर्क, विचार जहाँ तक कर सकते हैं, कीजिये। इसके पश्चात् जब आपने मन में स्थिर सिद्धान्त किया, कि यही, एवं केवलमात्र यही सत्य है, और कुछ नहीं है, तब फिर तर्क न कीजियेगा, तब मुँह एकदम बन्द कीजिये। तब फिर तर्क–युक्ति न सुनिये, स्वतः भी तर्क न कीजिये। फिर तर्क–युक्ति का प्रयोजन क्या ? आपने तो विचार करके तृप्ति–लाभ कर लिया है, आपने तो समस्या का सिद्धान्त कर लिया है, अब तो फिर शेष क्या है ? अब सत्य का साक्षात्कार करना होगा। फिर वृथा तर्क में अधिक अमूल्य समय नष्ट करने से फल क्या है ? अब उस सत्य का ध्यान करना होगा, तथा जो कोई चिन्तन आपको तेजस्वी बनाये, उसे ही ग्रहण करना होगा एवं जो दुर्बल बनाये, उसे ही परित्याग करना होगा। भक्त मूर्ति–प्रतिमा आदि और ईश्वर का ध्यान करते हैं। यही स्वाभाविक साधनाप्रणाली है, किन्तु इससे अत्यन्त मन्द गति से अग्रसर होना होता है। योगीगण अपनी देह के अभ्यन्तर के विभिन्न केन्द्र अथवा चक्र पर ध्यान करते हैं और मन के भीतर के शक्तिसमूह की परिचालना करते हैं। ज्ञानी कहते हैं, मन का भी अस्तित्व नहीं है; देह का भी अस्तित्व नहीं है। इस देह और मन के चिन्तन को दूर कर देना होगा, अतएव उनका चिन्तन करना अज्ञानोचित कार्य है। यह मानो एक रोग को लाकर दूसरे एक रोग को आरोग्य करने के समान है। अतएव उनका ध्यान ही सब की अपेक्षा कठिन है–नेति, नेति; वे सब ही वस्तुओं के अस्तित्व का निरास करते हैं, तथा जो शेष रहता है, वही आत्मा है। यही सब की अपेक्षा अधिक विश्लेषणात्मक (विलोम) साधन है। ज्ञानी केवल विश्लेषण के बल से जगत् को आत्मा से विच्छिन्न करना चाहते हैं। 'हम ज्ञानी हैं' यह बात कहना अत्यन्त सहज है, परन्तु यथार्थ ज्ञानी होना बड़ा ही कठिन है। वे कहते हैं:–

'उत्तिष्ठत् जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति।'

–कठ उपनिषद् १/३/१४

अर्थात्– "पथ अत्यन्त दीर्घ है, यह मानो तलवार की तीक्ष्ण धार के ऊपर से चलना है; किन्तु निराश मत होओ। उठो, जागो, जब तक उस चरम लक्ष्य में पहुँचते नहीं, तब तक मत रुकना।"

PRINTPOINT 0562-2262261

SIDDHYOG Regd. No. L.Ag. 008

October, 2005

प्रधान कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सैंवाई (एत्मादपुर) आगरा [illegible]

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________________

____

____

□□□□□□

रक्ताम्भोजदलाभिरामनयनं पीताम्बरालंकृतं श्यामांग द्विभुजं प्रसन्नवदनं श्री सीतया शोभितम्।
कारुण्यामृतसागरं प्रियगणैर्भ्रात्रादिभिर्भावित वन्दे विष्णुशिवादिसेव्यमनिशंभक्तेष्टसिद्धिप्रदम्।।

अर्थात्—जो भक्तों की अभिलाषा पूर्ण करने वाले हैं, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि निरंतर जिनकी सेवा किया करते हैं, हनुमान, सुग्रीव एवं भरत आदि भाई बड़े प्रेम से जिनकी आराधना में लगे रहते हैं; उन श्यामसुन्दर, द्विभुज, पीताम्बरधारी, प्रसन्नमुख, लाल कमल के दल के समान सुन्दर नेत्र वाले भगवान श्रीराम की मैं वन्दना करता हूँ।

प्रकाशक एवं मुद्रक :- विनय गजानन शर्मा द्वारा कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसईकलां, ताजगंज, आगरा के लिए राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा-3 से मुद्रित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सैंवाई (एत्मादपुर) आगरा से प्रकाशित।
सम्पादक—आचार्य ब्र. (डॉ.) बाबूलाल शर्मा